

॥ श्रीः ॥

याज्ञवल्क्यशिक्षा ।

श्रीमद्याज्ञवल्क्यमहर्षिप्रणीता ।

(यजुर्वेदसंहितापाठस्वरादिज्ञानोपयोगिनी)

मुरादाबादनवासि स्व० पण्डित श्रीज्वालाप्रसाद-
मिश्रविरचितया

भाषाटीकया समलंकृता ।

सेयं

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासंश्रुष्टा

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम) मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशिता ।

संवत् १९७५, शके १८४७.

सर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्षने स्वाधीन रक्ता है ।

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासन खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लैन, निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेस बम्बईमें अपने लिप्रे छापकर प्रकाशित किया.

श्रीः ।

अथ याज्ञवल्क्यशिक्षा प्रारम्भ्यते ॥

53

श्रीगणेशाय नमः ।

अथातस्त्रयलक्षणंव्याख्यास्यामः ॥

उदात्तश्चानुदात्तश्चस्वरितश्चतथैव च ॥

लक्षणंवर्णयिष्यामिदैवतंस्थानमेव च ॥ १ ॥

अब यजुर्वेदियोंके उपयोगिनी याज्ञवल्क्यशिक्षाका आरंभ करते हैं। प्रथम तीनों स्वरोंका लक्षण कहते हैं, उदात्त अनुदात्त और स्वरित यह तीन स्वर हैं। इनके लक्षण देवता स्थान वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥

शुक्लमुच्चंविजानीयात्रीचलोहितमुच्यते ॥

श्यामंतुस्वरितंविद्यादग्निरुच्चेतुदैवतम् ॥ २ ॥

उदात्त स्वर शुक्ल, अनुदात्त लाल, स्वरितका श्याम रंग है, उदात्तका अग्नि देवता ॥ २ ॥

नीचेसोमंविजानीयात्स्वरितेसविताभवेत् ॥

उदात्तंब्राह्मणंविद्यात्रीचःक्षत्रियउच्यते ॥ ३ ॥

अनुदात्तका चन्द्रमा, स्वरितका सविता देवता है, उदात्त ब्राह्मण, अनुदात्त क्षत्रिय, ॥ ३ ॥

वैश्यंतुस्वरितंविद्याद्भारद्वाजमुदात्तकम् ॥

नीचंगौतममित्याहुर्गार्ग्यचस्वरितंविदुः ॥ ४ ॥

स्वरितस्वर वैश्य वर्ण है. उदात्तका भारद्वाज; अनुदात्तका गौतम और स्वरितका गार्ग्य ऋषि हैं ॥ ४ ॥

विद्यादुदात्तंगायत्रीचनीचत्रैष्टुभमुच्यते ॥

जागतंस्वरितंविद्यादतएवंनियोगतः ॥ ५ ॥

उदात्तका गायत्री, अनुदात्तका त्रिष्टुप्, स्वरितका जगती छन्द जानना चाहिये ॥ ५ ॥

गांधर्ववेदेयेप्रोक्ताःसप्तषड्जादयःस्वराः ॥

तएववेदेविज्ञेयाम्रयउच्चादयःस्वराः ॥ ६ ॥

(४) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

गान्धर्व वेदमें जो षड्ज मध्यम धैवत पंचम ऋषभ गांधार निषाद यह सात स्वर कहे हैं, वे वेदमें उदात्त अनुदात्त स्वरितके अन्तर्गत जानना ॥ ६ ॥

उच्चौनिषादगांधारौनीचौऋषभधैवतौ ॥

शेषास्तुस्वरिताज्ञेयाःषड्जमध्यमपंचमाः ॥ ७ ॥

निषाद गांधार उदात्त हैं, ऋषभ धैवत अनुदात्त हैं, षड्ज मध्यम पंचम यह स्वरित हैं ॥ ७ ॥

षड्जोवेदेशिखंडीस्यादृषभःस्यादजामुखे ॥

गावोरटंतिगांधारंक्रौञ्चाश्चैवतुमध्यमम् ॥ ८ ॥

वेदमें षड्ज स्वर मयूरकी वाणी है, बकरीके मुखसे ऋषभका शब्द होता है, गौ गांधार और क्रौञ्च (चकवा) मध्यम स्वरसे बोलता है ॥ ८ ॥

कोकिलःपञ्चमोज्ञेयोनिषादंतुवेद्वजः ॥

आश्वश्चधैवतोज्ञेयःस्वराःसप्तेतिगीयते ॥ ९ ॥

कोकिला पंचम स्वरसे, हाथी निषाद स्वरसे, घोडा धैवत स्वरसे बोलता है। इसप्रकार यह सात स्वर हैं ॥ ९ ॥

निमेषमात्रःकालःस्याद्विद्युत्कालस्तथापरे ॥

अक्षरात्तुल्ययोगाच्चमतिःस्यात्सोमशर्मणः ॥ १० ॥

जितनी देरमें पलक लगे इतने कालका नाम निमेष है, कोई कहते हैं जितने समयमें बिजली चमकै इतने कालको निमेष कहते हैं, वर्णोंके असमान सम्बन्धके उच्चारणमें जितना समय लगे वह एक मात्रा कहाती है, यह सोमशर्माका कथन है ॥ १० ॥

सूर्यरश्मिप्रकाशाद्याकणिकायत्रदृश्यते ॥

आणवस्यतुसामात्रामात्राचचतुराणवा ॥ ११ ॥

सूर्यकी किरणोंके प्रकाशमें जो अणु दिखाई देते हैं वही अणुकी मात्रा है, यह चार अणुकी एक मात्रा होती है ॥ ११ ॥

मानसेचाणवंविद्यात्कण्ठेविद्याद्विराणवम् ॥

त्रिराणवंतुजिह्वाग्नेनिस्सृतंमात्रिकंविदुः ॥ १२ ॥

मानमें अणु कण्ठमें आनेतक दो अणु, जिह्वाके अग्रभागमें आनेमें तीन अणु और बाहर निकलनेपर मात्रा होती है ॥ १२ ॥

अवग्रहेतुकालः स्यादर्धमात्राप्रकीर्तिता ॥

पदयोरन्तरेकाल एकमात्राविधीयते ॥ १३ ॥

“समासविशिष्ट पदके पूर्वभागमें एक मात्रा काल विराम करके अग्रिम पदका उच्चारण करना चाहिये यह अवग्रह है याज्ञवल्क्यके मतमें अर्धमात्रिक कालका विराम नहीं कहा है” जितना समय अवग्रहमें लगे वह अर्धमात्राका समय है, और पदोंके अन्तरमें एक मात्रा विरामकाल है ॥ १३ ॥

ऋचोर्द्वेतुद्विमात्रः स्यात्त्रिमात्रः स्याद्वगंतके ॥

रिक्तंतुपाणिमुत्क्षिप्यद्वेमात्रेधारयेद्बुधः ॥ १४ ॥

आधी ऋचा होनेपर दो मात्राका समय, और ऋक्की पूर्तिमें तीन मात्राका समय है, रीते हाथको दो मात्रा पर्यन्त बुद्धिमान् उठावे ॥ १४ ॥

एकमात्रोभवेद्द्वस्वोद्विमात्रोदीर्घउच्यते ॥

त्रिमात्रस्तुप्लुतोज्ञेयोव्यंजनञ्चार्द्धमात्रकम् ॥ १५ ॥

एक मात्राका ह्रस्व, दोका दीर्घ, तीनका प्लुत होता है, और व्यंजन अर्ध मात्राका होता है ॥ १५ ॥

विवृतौचावसानेचऋचोर्द्वेचतथापरे ॥

पदेचपादसंस्थानेशून्यहस्तंविधीयते ॥ १६ ॥

विवार प्रयत्नमें अवसानमें अर्धऋचामें तथा पर पदमें, पदके अन्तमें, शून्य हस्तका प्रयोग करे ॥ १६ ॥

प्रणवंतुप्लुतंकुर्याद्ब्रुचाहतीर्मातृकाविदुः ॥

चापस्तुवदतेमात्रांद्विमात्रावायसोब्रवीत् ॥ १७ ॥

अँकारको प्लुत उच्चारण करे व्याहृति मातृकारूप हैं, नीलकण्ठ एक मात्रासे बोलता है, काक दो मात्रासे बोलता है ॥ १७ ॥

शिखीवदेत्रिमात्रांविमात्राणामितिसंस्थितिः ॥

वर्णोजातिश्चमात्राचगोत्रंछन्दश्चदेवतम् ॥ १८ ॥

मोर तीन मात्रासे बोलता है, वर्णोंकी जाति मात्रा गोत्र छन्द देवता ॥ १८ ॥

एतत्सर्वसमाख्यातंयाज्ञवल्क्येनधीमता ॥

हस्तौतुसंयतौधार्यौजानुभ्यामुपरिस्थितौ ॥ १९ ॥

यह सब बुद्धिमान् याज्ञवल्क्यजीने वर्णन किया है । अब अध्ययनविधि कहत हैं नियमित होकर अपने दोनों हाथोंको दोनों जाँघोंपर धरे ॥ १९ ॥

(६) वाजसनेयित्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

गुरोरनुमतंकुर्यात्पठन्नान्यमतिर्भवेत् ॥

ऊरुभागेतृतीयेतुकरंविन्यस्यदक्षिणम् ॥ २० ॥

और गुरुकी आज्ञासे अनन्यमति होकर पाठ आरंभ करै, ऊरुके तृतीय भागमें दहिना हाथ धरके ॥ २० ॥

प्रसन्नमानसोभूत्वाकिंचिन्निम्नमधोमुखम् ॥

प्रणवंप्राक्प्रयुञ्जीतव्याहतीस्तदनंतरम् ॥ २१ ॥

प्रसन्न मनसे कुछ मुख नीचा किये हुए पहले ॐकार और फिर व्याहृतिर्बोका उच्चारण करके ॥ २१ ॥

सावित्रीचानुपूर्व्येणततोवेदान्समारभेत् ॥

कूर्मोङ्गानीवसंहृत्यचेष्टादृष्टिदृढमनः ॥ २२ ॥

फिर गायत्रीको पाठकर वेदोंका आरंभ करै, जिस प्रकार कछुआ अपने अंग संकुचित करलेताहै, इसीप्रकार चेष्टा दृष्टि और मनको दृढ करै ॥ २२ ॥

स्वस्थःप्रशांतोनिर्भीकोवर्णानुच्चारयेद्बुधः ॥

नाभ्याहन्यान्ननिर्हन्यान्नगायेन्नैवकंपयेत् ॥ २३ ॥

स्वस्थ, शान्त, और निर्भय होकर अक्षरोंको बुद्धिमानीसे उच्चारण करै, न एक वर्णके उच्चारणमें दोदो उच्चारण करै, न तोड़कर पढ़ै, न गाता हुआ और न कम्पित होताहुआ पढ़ै ॥ २३ ॥

यथैवोच्चारयेद्वर्णास्तथैवैतान्समापयन् ॥

निवेश्यदृष्टिहस्ताग्रेशास्त्रार्थमनुचिन्तयेत् ॥ २४ ॥

जिसप्रकार वर्णोंको उच्चारण करै उसीप्रकार समाप्त करै, दृष्टिके अग्रभागमें हाथको रखकर शास्त्रके अर्थको विचारे ॥ २४ ॥

सममुच्चारयेद्वर्णान्हस्तेनचमुखेनच ॥

स्वरश्चैवतुहस्तश्चद्वावेतौयुगपत्स्थितौ ॥ २५ ॥

हाथसे स्वर और मुखसे वर्णोंको उच्चारण करै, स्वर और हाथ यह दोनों समान ही स्थित होते हैं ॥ २५ ॥

हस्तभ्रष्टःस्वरभ्रष्टो न वेदफलमश्नुते ॥

न करालो न लंबोष्ठो नाव्यक्तो नानुनासिकः ॥ २६ ॥

हस्त और स्वरसे भ्रष्ट होनेसे वेदपाठका फल नहीं मिलता, तीक्ष्ण बोलना

लम्बे होठ करना, जो समझमें न आवे ऐसा अव्यक्त उच्चारण करना ॥ २६ ॥

गद्गदोबद्धजिह्वश्चनवर्णान्वक्तुमर्हति ॥

प्रकृतिर्यस्यकल्याणीदंतोष्ठौयस्यशोभनौ ॥ २७ ॥

बोलनेमें कंठका गद्गद होना, जिह्वाका बद्ध होना, इनसे वर्ण उच्चारण नहीं हो सकता जिसकी प्रकृति अच्छी है और जिसके दांत तथा होठ अच्छे हैं ॥ २७ ॥

प्रगल्भश्चविनीतश्चसवर्णान्वक्तुमर्हति ॥

शंकितंभीतमुद्धुष्टमव्यक्तमनुनासिकम् ॥ २८ ॥

जो उच्चारणमें प्रगल्भ और गुरुजनोंके सामने मन्त्रता विनयसे संपन्न है वह वर्ण उच्चारण अच्छीरीतिसे कर सकता है: शंकित, भीत, ऊंचा बोलना, अस्पष्टता, नासिकामें बोलना ॥ २८ ॥

काकस्वरंमूर्ध्निगतंतथास्थानविवर्जितम् ॥

विस्वरंविरसंचैवविशिष्टंविषमाहतम् ॥ २९ ॥

काककी समान बोलता सब वर्णोंको मूर्ध्निमें उच्चारण करना स्थानरहित बोलना, कुस्वरसे बोलना, अमिलित बोलना, विषमरूपसे आहत करना ॥ २९ ॥

व्याकुलंतालहीनंचपाठदोषाश्चतुर्दश ॥

संहितास्वारबहुलः पदसंज्ञासमाकुलः ॥ ३० ॥

व्याकुलता, लयराहित होना यह चौदह पाठके दोष हैं। संहिता, स्वरकी अधिकाई और पद संज्ञासे व्याप्त ॥ ३० ॥

क्रमसंधिसमाकीर्णोदुस्तरोमंत्रसागरः ॥

ऋक्संहितांत्रिरभ्यस्ययजुषांवासमाहितः ॥ ३१ ॥

क्रम और संधिसे युक्त मंत्रसागर बड़ा दुस्तर है ऋक् वा यजु संहिताको तीनवार सावधानीसे अभ्यास करके ॥ ३१ ॥

साम्नांवासरहस्यांचसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥

संहितानयतेसूर्यपदंचशशिनःपदम् ॥ ३२ ॥

वा रहस्यसहित सामका पाठ करके सब पापोंसे छूट जाता है। संहिता सूर्य-लोकको पद चन्द्रके लोकको ॥ ३२ ॥

क्रमश्चनयतेसूक्ष्मंयत्तत्पदमनामयम् ॥

कार्लिदीसंहिताज्ञेयापदयुक्तासरस्वती ॥ ३३ ॥

(८) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

और क्रम सूक्ष्म अनामय पदको प्राप्त करता है, संहिता कालिन्दी है पदयुक्त सरस्वती है ॥ ३३ ॥

क्रमेणावर्त्ततेगंगाशंभोर्वाणीतुनान्यथा ॥

यथामहाद्वंदंप्राप्यक्षितोलोष्टोविनश्यति ॥ ३४ ॥

: क्रमपाठ गंगा है, यह शिवकी वाणी अन्यथा नहीं है, जैसे महाद्वंद्व डाला हुआ डेला नष्ट हो जाता है ॥ ३४ ॥

एवंदुश्चरितंसर्ववेदेत्रिवृतिमज्जति ॥

आम्रपालाशविल्वानामपामार्गशिरीषयोः ॥

वाग्यतःप्रातरुत्थाय भक्षयेदंतधावनम् ॥ ३५ ॥

इसी प्रकार तीन बार वेदपाठसे सब पाप नष्ट हो जाते हैं, आम, ढाक, बेल, चिरचिटा, शिरस इन वृक्षांकी सबेरेही उठकर मौन हो दतौन करै ॥ ३५ ॥

खदिरश्चकदंबश्चकरवीरकरंजकौ ॥

एतेकंटकिनःपुण्याःक्षीरिणस्तुयशस्विनः ॥ ३६ ॥

खैर, कदम्ब, कनेर, करंज, यह कौटवाले वृक्ष पुण्यदायक हैं, क्षीरवाले यश-दायक हैं ॥ ३६ ॥

तेनास्यकरणेसूक्ष्ममाधुर्यंचैवजायते ॥

त्रिफलालवणाक्तावैभक्षयेच्छिष्यकःसदा ॥

क्षीणमेधाजनन्येपास्वरवर्णकरीतथा ॥ ३७ ॥

इनकी दतौनसे मुखमें सूक्ष्म मधुरता होती है, इर्द बहेडा आमला यह सेंधानमकके साथ सदा शिष्य खाय, यह क्षीण बुद्धिवालेकी बुद्धि बढ़ाती और स्वर तथा वर्ण करनेवाली वस्तु है ॥ ३७ ॥

स्वरहीनंतुयोधीतेमंत्रवेदविदोविदुः ॥

यजू०षिनोसाधयन्तिभुक्तमव्यंजनंयथा ॥ ३८ ॥

जो स्वरके बिना मंत्रपाठ करते हैं, यजुष् उनके कार्य सिद्ध नहीं करसकता, ऐसा वेदज्ञ कहते हैं जैसे अव्यंजनवस्तु खाई कुछ कर्म सिद्ध नहीं करती ॥ ३८ ॥

हस्तहीनंतुयोधीतेस्वरवर्णविवर्जितम् ॥

ऋग्यजुस्सामभिर्दग्धोवियोनिमधिगच्छति ॥ ३९ ॥

जो हस्तहीन तथा स्वरवर्ण विहीन वेद पाठ करते हैं, वह ऋक् यजुष् सामसे दग्ध हुए कुयोनिमें गमन करते हैं ॥ ३९ ॥

ऋचोयजूंषिसामानिहस्तहीनानियःपठेत् ॥

अनृचोब्राह्मणस्तावद्यावत्स्वारनंविदति ॥ ४० ॥

जो बिना हाथोंके चलाये ऋक् यजुष् सामको पढ़ते हैं, वह स्वरज्ञानके बिना ब्राह्मण ऋचाहीन कहाता है ॥ ४० ॥

ज्ञातव्यश्चतथैवार्थोवेदानां कर्मसिद्धये ॥

पाठमात्रापपाठात्तुपकेगौरिवसीदति ॥ ४१ ॥

इसी प्रकार क्रम वा कर्मसिद्धिके निमित्त वेदका अर्थ भी जानना चाहिये, केवल पाठ वा अशुद्धपाठसे कीचमें फँसी गौकी समान दुःखी होता है ॥ ४१ ॥

स्वरवर्णप्रयुंजानोहस्तेनाधीतमाचरन् ॥

ऋग्यजुस्सामभिः पूतो ब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ॥ ४२ ॥

जो स्वर वर्णका प्रयोग करते हस्तयुक्त वेद पढ़ते हैं, वे ऋक् यजुष् सामसे पवित्र होकर ब्रह्मलोकको गमन करते हैं ॥ ४२ ॥

नकुर्वीतपदं दीर्घं नकुर्वीत विलंबितम् ॥

पदस्य ग्रहमोक्षौ च यथाशीघ्रगतिर्हयः ॥ ४३ ॥

पदको दीर्घ न करै, विलम्बमें उच्चारण न करै, पदके ग्रहण और त्यागमें शीघ्रगतिवाले अश्वकी समान आचरण करै ॥ ४३ ॥

आदरं कुरु यत्नेन कारणं हितदात्मकम् ॥

आस्येन च शयं कुर्यात्पठन्नान्यमतिर्भवेत् ॥ ४४ ॥

यत्नपूर्वक आदरसे पाठ करे, कारण कि यह कारणही तदात्मक है, मुखपर हाथ न लगाकर अनन्य मनसे पाठ करै ॥ ४४ ॥

न चास्य मुष्टिबंधी स्यान्न चात्युत्तममाचरेत् ॥

जुलू नौका स्फुटोदंडी स्वस्तिको मुष्टिराकृतिः ॥

एते वै हस्तदोषाः स्युः परशुश्चैव सप्तमः ॥ ४५ ॥

हाथकी बहुत मुट्ठी न बांधें, न बहुत हाथ फैलावे जुलू नौका दण्डकी समान, स्वस्तिक (सीधी हथेली करना) मुष्टिकी समान आकृति करना, फरसेकी समान आकार करना, यह सात हाथके दोष हैं ॥ ४५ ॥

(१०) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता—परिशिष्टभागे—

यथावाणीतथापाणीरिक्तंतुपरिवर्जयेत् ॥

यत्रयत्रस्थितावाणीपाणिस्तत्रैवतिष्ठति ॥ ४६ ॥

जैसी वाणी हो वैसाही हाथ हो रीता हाथ न चलावे, जहाँ जहाँ वाणी स्थित हो वहीं वहीं पाणि स्थित हो ॥ ४६ ॥

यथाधनुष्याविततेशरेक्षितेपुनर्गुणः ॥

स्वस्थानंप्रतिपद्येततद्वद्धस्तगतःस्वरः ॥ ४७ ॥

जैसे धनुष खेंचकर वाण छोड़नेसे डोरा फिर अपने स्थानको प्राप्त हो जाता है, इसी प्रकार हाथसे स्वर प्रक्षेप होते हैं ॥ ४७ ॥

उत्तानंसोन्नतंकिंचित्सुव्यक्तांगुलिरंजितम् ॥

स्वरविद्धंकरंकुर्यात्प्रादेशादेशगामिनम् ॥ ४८ ॥

ऊँचा करनेमें कुछ ऊँचा जिसमें अंगुली स्फुट सीधी रहे, इस प्रकार चारह अंगुलके मध्यमेंही गति करता हुआ हाथ स्वर बोधन करे ॥ ४८ ॥

अंगुष्ठस्योत्तरेपर्वतर्जन्युपरियद्भवेत् ॥

प्रादेशस्यतुसोदेशस्तन्मात्रंचालयेत्करम् ॥ ४९ ॥

अँगुठके ऊपरके पौरुषमें तर्जनीके ऊपर पोरुषतक फैलाया हुआ हाथ प्रादेश कहाता है, इतनेही स्थानमें कर चालन करे ॥ ४९ ॥

मनुष्यतीर्थोच्चंकृत्वापितृतीर्थोदकंजजेत् ॥

नामितंकरपृष्ठेतुसव्यक्तांगुलिमोक्षणम् ॥ ५० ॥

उदात्तको मनुष्यतीर्थसे उच्च करे, पितृतीर्थ [अंगुष्ठ प्रदेशिनीके मध्यमें जैसे जल जाता है] करपृष्ठकी समान नीचा करे जिसमें अंगुलिमोक्षण प्रगट दिखाई दे ॥ ५० ॥

स्वरितेऽयंगुलंविद्यान्निपातेतुषडंगुलम् ॥

उत्थानेतुनवांगुल्यमेतत्स्वारस्यलक्षणम् ॥ ५१ ॥

स्वरितमें तीन अंगुल, अनुदात्तमें छः अंगुल, उदात्तमें नौ अंगुल कर चालन करे, यह स्वरका लक्षण है ॥ ५१ ॥

अभ्यासार्थेद्वितांवृत्तिप्रयोगार्थेतुमध्यमाम् ॥

शिष्याणामुपदेशार्थेकुर्याद्वृत्तिविलंबिताम् ॥ ५२ ॥

अभ्यासके निमित्त शीघ्रवृत्ति, प्रयोगके निमित्त मध्यम वृत्ति, और शिष्यके उपदेशके निमित्त विलम्बित वृत्तिका आश्रय करे ॥ ५२ ॥

ऐंद्रीतुमध्यमावृत्तिःप्राजापत्याविलंबिता ॥

अग्निमारुतयोर्वृत्तिःसर्वशास्त्रेषुनिदिता ॥ ५३ ॥

मध्यमा वृत्तिका इन्द्र देवता, विलम्बित वृत्तिका प्राजापत्य देवता, शीघ्र गतिका अग्नि और वायु देवता है, यह वृत्ति सब शास्त्रोंमें निन्दित है ॥ ५३ ॥

मुष्ट्याकृतिर्मकारेतुनकारेतुनखाग्रतः ॥

अनुस्वारंगुष्ठपातऊष्मातिंगुलिमोक्षणम् ॥ ५४ ॥

मकारके उच्चारणमें मुष्टिकी आकृति, नकारके उच्चारणमें नखाग्रकी आकृति, अनुस्वारमें अंगुष्ठपात, और ऊष्माण (शपसह) में अंगुलि मोक्षण करे ॥ ५४ ॥

उदात्तंभ्रुविपातेनप्रचयनोग्रएवच ॥

शेषपडंगुलंविद्यान्निचितंतुविधीयते ॥ ५५ ॥

भौंकी ओर हाथ करके उदात्त, नासाके अग्रभागमें हाथ रखकर प्रचय स्वर उच्चारण करे, और शेष स्वरमें छः अंगुल हाथ नीचा करे ॥ ५५ ॥

पडंगुलंतुजात्यस्यहस्तस्यानुपथस्यच ॥

तच्चतुर्भागमात्रंतुहस्तस्तेनैववर्तयेत् ॥ ५६ ॥

जात्यस्वरमें छः अंगुल हाथ चले, और उसके चतुर्भागमात्र हाथसे अनुपथ स्वर वर्ते ॥ ५६ ॥

ककारांतिटकारांतिङ्गणेचांगुलिनामयेत् ॥

पंचांगुल्यपकारेतुतकारेकुंडलाकृतिः ॥ ५७ ॥

ककारके अन्तमें टकारान्तमें ङ ग के उच्चारणमें अंगुलि झुकावे, पकारमें पांचों अंगुलि मिलावे ॥ ५७ ॥

ऊर्ध्वक्षेपाच्चयोष्माचणयःक्षेपाच्चयोभवेत् ॥

एकैकामुत्सृजेद्धीरःस्वरितेतृभयंक्षिपेत् ॥ ५८ ॥

तकारके उच्चारणमें कुंडलाकार करे ऊपर हाथसे चय ऊष्मा स्वर, नीचे हाथके पातसे अनुदात्त बुद्धिमान् एकरे अंगुल उत्सृजन करे स्वरितमें दोनोंको त्यागदे ५८॥

अंगुष्ठाकुंचनंलघावनुस्वारेत्वपाथरसम् ॥

दीर्घरंगेचतर्जन्याःप्रसारःपारिकीर्तितः ॥ ५९ ॥

लघु अनुस्वारमें अंगुष्ठको आकुंचन करे, यथा [अथा रसम् । ४०९।३] दीर्घ रंग [अभिगृणन्तु देवा १४।४] में तर्जनीका प्रसार कहा है ॥ ५९ ॥

(१२) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

तर्जन्यंगुष्ठयोःस्पर्शेष्युदात्तप्रतिविध्यते ॥

नीचंतुमध्यमंकुर्याच्छेषनीचतश्क्रमात् ॥ ६० ॥

तर्जनी और अंगुष्ठके स्पर्शमें उदात्त है नीचस्वरको मध्यम और शेषको क्रमसे नीचतर करे ॥ ६० ॥

स्वरितयद्भवेत्किंचिद्वकारसहसंयुतम् ॥

ऊष्माणंतद्विजानीयात्रिक्षिपेदुभयोरपि ॥ ६१ ॥

स्वरित जो किंचिद् वकारसे संयुक्त हो उसको ऊष्माणसंज्ञक जानै, उनमें वकारको द्वित्व कर दे ॥ ६१ ॥

स्वरितसंज्ञेचनिक्षिप्तेसंयोगोयत्रदृश्यते ॥

द्विमात्रिकेभवेदेकमात्रिकेतूभयंक्षिपेत् ॥ ६२ ॥

स्वरितसंज्ञक निक्षेपमें जहाँ संयोग दिखाई दे तो वह द्विमात्रिक होजाता है अर्थात् द्विमात्रिकमेंका एक क्षेप द्वित्व होजाता है, त्रिमात्रिकमें दोनोंको द्वित्व करे ॥ ६२ ॥

जात्येचस्वरितेचैववकारोयत्रदृश्यते ॥

कर्तव्यस्तूभयोःक्षेपो वायव्यइतिदर्शनम् ॥ ६३ ॥

जात्य और स्वरित होनेमें जहाँ वकार दिखाई दे, वहाँ दोनोंका क्षेप करे, यथा वायव्ये १९।२६ यह उदाहरण है ॥ ६३ ॥

शृंगवद्वाथवत्सस्यकुमारीकुचयुग्मवत् ॥

उभक्षेपस्वरोयत्रसविसर्गउदाहृतः ॥ ६४ ॥

बलदेके सींगकी समान वा कुमारीके दोनों स्तनोंकी समान दो बिन्दु विसर्ग कहाते हैं ॥ ६४ ॥

विसर्गातस्वरोयत्रस्वरितोयत्रदृश्यते ॥

दीर्घश्चैवतुकारश्चतत्रोभक्षेपउच्यते ॥ ६५ ॥

जहाँ विसर्गान्त स्वर स्वरित दिखाई दे और वकार दीर्घ हो तो दोनोंको द्वित्व करे ॥ ६५ ॥

त्रिविधस्तुभवेद्विष्माप्रचिताबलकातरा ॥

स्वरितेप्रचिताविद्यात्रिपातेबलकाविदुः ॥ ६६ ॥

ऊष्मवर्ण तीन प्रकारके होते हैं, प्रचिता, बलका, तरा, स्वरितमें प्रचित और निपातमें बलका ॥ ६६ ॥

उत्थानेतुतथाताराएताभिस्त्रिभिर्ह्रस्वभिः ॥

मात्रामात्राविदित्वातुततःक्षेपंप्रयोजयेत् ॥ ६७ ॥

उत्थानमें तारा, इस प्रकार तीन ऊष्माणोंकी मात्रासे मात्राको जानकर द्विव करै ॥ ६७ ॥

अक्षरंभजतेकाचित्काचिद्विद्वित्वेप्रतिष्ठितम् ॥

समानेजातिकाकाचित्काचिदूष्माप्रदायिका ॥ ६८ ॥

कोई अक्षरको भजते, और कोई द्वित्वमें प्रतिष्ठा मानतेहैं, कोई समान जातिका और कोई ऊष्माप्रदायिका है ॥ ६८ ॥

यथाबालस्यसर्पस्यउच्छ्वासोलघुचेतसः ॥

एवमूष्माप्रयोक्तव्याहकारःपरिवर्जितः ॥ ६९ ॥

जैसे बाल सर्पका लघुचित्तसे उच्छ्वास होता है, इसप्रकारसे हकारको छोड़कर शेषस ऊष्माणोंका प्रयोग करै ॥ ६९ ॥

विवृत्तिप्रत्ययादूष्मांप्रवदंतिमनीषिणः ॥

तामेवप्रतिषेधंति आई ऊ ए निदर्शनम् ॥ ७० ॥

बुद्धिमान् विचारकी प्रतीतिसे ऊष्माको जानते हैं, कहीं नहीं भी-होती, यथा आ ई ऊ ए ॥ ७० ॥

अष्टौस्वरान्प्रवक्ष्यामि तेषामेवतुलक्षणम् ॥

जात्योभिनिहितःक्षैप्रःप्रश्लिष्टश्चतथापरः ॥ ७१ ॥

आठ स्वर और उनके लक्षण कहता हूँ, जात्य, अभिनिहित, क्षैप्र, प्रश्लिष्ट॥७१॥

तैरोव्यञ्जनसञ्ज्ञश्चतथातैरोविरामकः ॥

पादवृत्तोभवेत्तद्वत्ताथाभाव्यइतिस्वराः ॥ ७२ ॥

तैरोव्यञ्जन, तैरोविरामक, पादवृत्त और ताथाभाव्य, एक पदमें प्रथमका अक्षर अनुदात्त हो उसके अनन्तर यकार वकार हो तो वह जात्य स्वर है अथवा अप्रवृत्त य, व, जात्य स्वर होते हैं ॥ ७२ ॥

एकपदेनीचपूर्वःसयवोजात्यइष्यते ॥ अपूर्वोपिपरस्तद्व-

द्धान्यंकन्यास्वारित्यपि ॥ एकपद इत्याह ॥ नीचपूर्वः

सयकारवकारौ वा जात्यः स्वारितो भवति ॥ यथाजात्यं

मनुष्यानिति । सुप्वेति । चम्बीव । धान्यम् । कन्याइव

(१४) वाजसनेयिश्चशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

स्वः । वीर्यम् । एवं ह्याह यानिचान्यानीदृग्लक्षणानि प-
दानि भवन्ति । एओआभ्यामुदात्ताभ्यामकारोरिफितश्चयः॥
अकारोयत्रलुप्येतत्चाभिनिहितंविदुः ॥ ७३ ॥

यथा मनुष्यान् १।३१ पदपाठे । सुप्तेति १। ३ चम्वीवेति २० । ७० धान्यम्
१।२० कन्वा इव १।७।१७ स्वः १८ । ६४ वीर्यम् १२ । ९४ इसी प्रकारके इन
लक्षणोंके औरभी पद जानने, ए ओ इन उदात्त स्वरोंमें जहां अकार रेफके साथ
अकारका लोप होजाय उसे अभिनिहित कहते हैं ॥ ७३ ॥

यथा कुक्कुटः+असि । कुक्कुटोसि १ । १६ । वेदः+असि ।
वेदोसि २ । २१ भागः+असि । भागोसि । ६।१६मारुतः+
असि । मारुतोसि । १।८।४५ श्वात्रः+असि । श्वात्रोसि ।
५।३१ । ते+अप्सरसाम्।तेप्सरसाम् २४।३७ ते+अवन्तु ।
तेऽवन्तु १९।१७। कः+असि । कोसि ७।२९। सः+अहम् ।
सोहम् । १।८।३५ एवर्ठहियानिचान्यानिदृग्लक्षणानि-
पदानिभवन्ति । इउवर्णौयदोदात्तावापद्येतयवौक्कचित् ॥
अनुदात्तेपदेनित्यंविद्यात्क्षैप्रस्यलक्षणम् ॥ ७४ ॥

जैसे कुक्कुटः+असि=कुक्कुटोसि १।१६। वेदः+असि=वेदोसि २।१ इत्यादि ।
इसी भाँति और भी इन लक्षणोंवाले पद जानने । इ उ वर्ण उदात्त होकर कहीं तो
नित्य अनुदात्त पदमें स्थित होनेसे उन्हें क्षैप्र द्वित्व जानै ॥ ७४ ॥

यथा त्रि+अंबकम् । त्र्यंबकम् ३ । ६० । द्रु+अन्नः । द्रन्नः ११
। ७० व्वीडु+अंगः । व्वीडुङ्गः २९।५१ वाजी+अर्वन् । वाज्य-
र्वन् ११ । ४४ एव७ह्याह यानि०भवन्ति ॥ इकारोयत्रदृश्येत
इकारेणैवसंयुतः॥ उदात्तश्चानुदात्तेन प्रश्लिष्टोभवतिस्वरः॥७५॥

१ यह चिह्न वह है कि, यह उदाहरण यजुर्वेदसंहिताके अमुकअध्यायके अमुक संज्ञमें है आगे भी
इसी प्रकार गाया ।

यथा त्रि+अम्बकम्-त्र्यम्बकम् ३।६० इत्यादि इसी प्रकार और पद जानने, जहाँ इकार इकारहीसे संयुक्त दीखै वह उदात्त अनुदात्तसे युक्त प्रक्षिष्ट स्वर होता है ॥ ७५ ॥

अभि+इन्धताम् । अभीन्धताम् ११।६१ । अभि+इमम् ।
अभीमम् ३८।७ । वि+इहि । व्वीहि १२।२७ । सुचि+इव ।
सुचीव । चम्वी+इव । चम्वीवेति । एव१७॥ह्याह यानिचान्यानि
उदात्तपूर्वयत्किंचिच्छन्दसिस्वरितंपदम् ॥ एषसर्वबहुस्वारस्तै
रोव्यंजनउच्यते ॥ ७६ ॥

यथा अभि+इन्धताम्=अभीन्धताम् इत्यादि इसीप्रकार औरभी पद जानने छन्दमें जो उदात्तपूर्वक कोई पद हो यह सब बहुत स्वखाला तैरोव्यंजन कहाता है ॥ ७६ ॥

इडे ३।९ । रंते । हव्ये । काम्ये । चंद्रे । ज्योते । अदि ति ।
सरस्वती । महि । विश्वश्रुतीतिभवंति । एव१७॥ह्याहयानि० भवं
ति ॥ अवग्रहात्परोयस्तुस्वरितः स्यादन्तरम् ॥ तैरोविरामंतं
विद्यादुदात्तोयद्यवग्रहः ॥ ७७ ॥

यथा इडे, रन्ते, इत्यादि इसप्रकार औरभी जाने, उदात्त अवग्रह स्वरसे परे जो स्वरित हो तो उसको तैरोविराम जाने और उसके विपरीत तैरोव्यंजन होता है ॥ ७७ ॥

यथा गोमुदिति गो+मत् २०।८१ गोपताविति गो+पतौ १।१
अप्रेति प्र+ प्र १२।३० । विततेति वि+तता २९।४० ताते
ति ता+ता २९।४० । समिद्धइति सम्+ईद्धः । २०।१ पदपाठे
एव १७॥ह्याहयानि० भवंति ॥ स्वरेति स्वरितेचैवविवृतिर्यत्रदृश्य-
ते । पादवृत्तोभवेत्स्वारः श्वित्रआदित्येतिनिदर्शनम् ॥ श्वित्रः+
आदित्यानाम् ॥ श्वित्र आदित्यानाम् २४।३९ । पुत्रः+ईधे ।

१ तैरोव्यंजनमन्थया इति वा पाठः ।

२ स्वरयोरन्तरे काले इति वा पाठः ।

(१६) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

पुत्र ईधे ११ । ३३ । दात्रे+एधि । दात्रएधि । कः+ईम् । कईम्
३३ । ५५ ताः+अस्य । ताअस्य । एव७ ह्याहयानि० भवन्ति ॥
उदात्ताक्षरयोर्मध्येभवेन्नीचस्त्ववग्रहः ॥ तथाभाव्यंभवेत्कंपस्त
नूनप्त्रेतिनिदर्शनम् ॥ ७८ ॥

यथा तनूनप्त्र इतितनू+नप्त्रे५।५ तनूनपादितितनू+नपात्
२१ । १० तनूनपातमिति तनू+नपातम् २८ । २ । एव७
ह्याहयानिपदानिलक्षणानिभवंति ॥ इत्यष्टपदसमाम्नायेवै-
शेषिकेयाज्ञवल्क्यवचनानांपदानांपाठः समाप्तः ॥

यथा गोमदिति गो + मत् इत्यादि इसी प्रकार और भी जाने । स्वर और
स्वरित इन दोनोंके मध्यमें जहाँ विवृत स्वर दिखाई दे, वह स्वर पादवृत्त होता
है, यथा श्वित्रः + आदित्यानाम्=श्वित्रऽआदित्यानाम् इत्यादि । जहाँ उदात्त
अक्षरके बीचमें अनुदात्त अवग्रह हो वह तथाभाव्यस्वर कहाता है, तनूनप्त्रे यह
दृष्टान्त है ॥ ७८ ॥

यथा तनूनप्त्र इति तनू+नप्त्र इत्यादि इसीप्रकार इस लक्षणके औरभी पद जानने ।
इत्यष्टपदसमाम्नाये वैशेषिके याज्ञवल्क्यवचनानां पदानां पाठः समाप्तः ॥

माध्यन्दिनविरोधिः स्यात्तथाभाव्यस्तुयः स्मृतः ॥

स्वरोनैवात्रदृश्येतभिन्नोदात्तानुदात्तकौ ॥ १ ॥

माध्यन्दिन विरोधी तथाभाव्य इसमें नहीं देखा जाता कारण कि इसमें उदात्त
अनुदात्तसे रहित स्वर नहीं देखा जाता ॥ १ ॥

स्वराः स्पर्शातः स्थोष्माणः ॥ कंठ्य । जिह्वामूलीय । तालव्य ।
मूर्धन्य । दंत्य । ओष्ठ्य । यमा विसर्जनीयनिपाताद्याश्चकिं व
वर्णदैवत्यलिङ्गाः स्वराः शुक्लाः नानादैवत्याः । स्पर्शाः कृष्णाः ।
कपिला अंतस्थाः । ऊष्माणोऽरुणाः । नीला यमाः । हरिता
नासिक्याः । पीतोनुस्वारः । रक्तोजिह्वामूलीयः । पीतउपध्मा-
नीयः । श्वेतोविसर्जनीयः । शबलो रंगः । अतिनीलोनुनासि-
क्यः । इत्यंतर्मध्यमयोर्नासिक्यं विद्यात् ॥ द्विरुदात्ताख्याइति

स्मृताः ॥ उदमनुदनिपाते आद्येचोपसर्गेनामाख्यातेचोपसर्ग-
निपाताश्चेति । किदैवत्याः । अक्षराणांचकेपुरुषाः । काःस्त्रियः ।
कानि नपुंसकानि इत्यत्रब्रूमः । कंठ्याआग्नेयाः अकारादयः ॥
जिह्वामूलीया नैऋत्याः ककारादयः । तालव्याः सौम्याः
चकारादयः । वायव्या मूर्धन्याष्टकारादयः । रौद्रा दंत्याः
तकारादयः । औष्ठ्या आश्विन्याः पकारादयः ॥ शेषा
वैश्वदेवाः अम् इत्येवमादयः । स्वरास्तुब्राह्मणाज्ञेयावर्गाणां
प्रथमाश्चये । द्वितीयाश्चतृतीयाश्चचतुर्थाश्चापिभूमिपाः ॥२॥

स्वर, स्पर्श, अन्तःस्थ, ऊष्माण, कण्ठस्थानीय, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय,
तालस्थानीय, मूर्धास्थानीय, दन्तस्थानीय, ओष्ठस्थानीय, यम, विसर्ग, निपात,
कौनकौनसे वर्ण, किसकिस देवता लिंगवाले हैं सो कहते हैं, उनमें स्वर शुक्लवर्ण
नानादेवतावाले हैं, स्पर्श (कते म तक) कृष्ण वर्ण हैं, अन्तस्थ (यरलव) कपि-
लवर्ण, ऊष्माण (शपसह) अरुण वर्ण हैं, यम (वर्गोंके पहले चारके आगे पांचवां
परे होनेपर मध्यमें पूर्वसदृश वर्ण) नीलवर्ण नासिकास्थानीय अनुनासिक (ङ ञ
ण न म) हरित वर्ण हैं, अनुस्वार पीतवर्ण जिह्वामूलीय ऋ क २ ख रक्तवर्ण,
उपध्मानीय २ प २ फ पीतवर्ण विसर्ग श्वेत वर्ण रंग श्वल (कवरारंग) अनुना-
सिक अतिनीलवर्ण इसी प्रकार स्वर और अन्तस्थके मध्यमें वर्णान्तको अनुनासिक
जाने द्वि उदात्त हैं । उत् निपात (एक अक्षरवाले) उपसर्गके आदिके उपसर्ग
और निपात यह किन देवताओंवाले हैं, इन अक्षरोंमें कौन स्त्री और कौन पुरुष है,
कौन नपुंसक है, सो कहते हैं, कण्ठचवर्ण अकारादि अग्नि देवतावाले हैं, तालस्था-
नवाले चकारादि चन्द्रदेवतावाले हैं, मूर्धास्थानवाले टकारादि वायुदेवतावाले हैं,
दन्तस्थानवाले तकारादि रुद्रदेवतावाले हैं, ओष्ठस्थानीय पकारादि आश्विनीदेवता-
वाले हैं, अं इत्यादि शेषवर्ण विश्वेदेवादेवतावाले हैं, स्वरवर्ण ब्राह्मण हैं, तथा वर्गोंके
प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ अक्षर क्षत्रियवर्ण हैं ॥ २ ॥

वर्गाणांपंचमावैश्याअंतस्थाश्चतथैवच ।

ऊष्माणश्चहकारश्चशूद्राएवप्रकीर्तिताः ॥ ३ ॥

वर्गोंके पांचवें अक्षर और अन्तस्थ शूद्र वर्ण हैं, ऊष्माण और हकार यह शूद्र
कहाते हैं ॥ ३ ॥

शुक्लवर्णानिनामानिआख्यातारोहितामताः ॥

कपिजलास्तूपसर्गाःकृष्णाश्चैवनिपातकाः ॥ ४ ॥

(१८) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता—परिशिष्टभागे—

नामिक शुक्ल वर्ण है, आख्यात (क्रिया) रक्तवर्ण उपसर्ग कपिजल वर्ण, और निपात कृष्णवर्ण हैं ॥ ४ ॥

भार्गवगोत्राणिनामानि भारद्वाजा आख्याताः ।

वासिष्ठाउपसर्गास्तु निपाताःकाश्यपाःस्मृताः ॥

पीतवर्णश्चोपसर्गो निपातःकृष्णवर्णकः ॥

सर्वतुसौम्यमाख्यातं नामवायव्यंहश्यते ॥

अग्निस्तूपसर्गःस्यान्निपातोवारुणःस्मृतः ॥ ५ ॥

नामिक भार्गवगोत्र, आख्यात भारद्वाज गोत्र हैं, उपसर्ग वासिष्ठ गोत्र, और निपात काश्यपगोत्रवाले हैं, उपसर्ग पीत और निपात कृष्ण वर्ण हैं, सब आख्यात चन्द्र देवतावाले, सब नामिक वायुदेवता वाले हैं, उपसर्गोंका अग्नि निपातका वरुण देवता है ॥ ५ ॥

प्रथमाश्चतर्थातस्थाः स्त्रीलिङ्गाःपरिकीर्तिताः ॥

शेषाक्षराणिषण्ढानिप्राहुर्लिङ्गविवेचकाः ॥ ६ ॥

प्रथम स्वर और अन्तस्थवर्ण स्त्रीलिङ्ग हैं, शेष अक्षर नपुंसक हैं ऐसा लिङ्ग-ज्ञाता कहते हैं ॥ ६ ॥

नाम्नामिन्द्रोदेवतावारुणःउपसर्गाणामादित्यःसर्वस्याक्षरगणस्य स्वरा विसर्जनीयोयमाश्चपुंलिङ्गाः । ङञणनमायरलवाःस्त्री-
लिङ्गाः । शेषाण्यक्षराणिनपुंसकलिङ्गानीति ॥ संधिश्चतुर्वि-
धोभवतीति ॥ लोपागमौ वर्णविकारः प्रकृतिभावश्चेति ।
तद्यथा तत्रलोपोभवति अयक्ष्मा+मा अयक्ष्मामा १ । १ ।
शततेजा+वायुःशततेजाव्वायुः १ । २४ । तिग्मतेजा+द्वि-
षुतः । तिग्मतेजाद्विषुतः १ । २४ इतिलोपः ॥ आगमोभवति
यथा प्रत्यङ्गसोमःप्रत्यङ्गसोमः १० । ३९ प्राक्सोमः प्राङ्ग-
सोमः १९ । २ अस्मान् सीते अस्मान्त्सीते १२ । ६१ त्रीन्
समुद्रान् त्रीन्त्समुद्रान् १३ । ३० इतिआगमः ॥ विकारोभवति
आ+इदम् एदम् ४ । १ आ+इमे एमे ९ । १८ आ+इष्ट्यहं
एष्ट्यहं १८ । ४१ प्र+इषितःप्रेषितः २१ । ५७ इतिविकारः ॥

१ आदित्यो मुनिभिः प्रोक्तः सर्वाक्षरगणस्य च । स्वराविसर्जनीयाश्च यमाःपुंलिङ्गकाःस्मृताः
इति वा पाठः ।

प्रकृतिभावो यथा, आशुः शिशांनः । युञ्जानः प्रथमम् । अदि-
तिः षोडशाक्षरेण ९ । ३४ । देवोवः सविता १ । १ इति प्रकृति
भावः ॥ आकाशस्थायथाविद्युत्स्फुटितामणिसूत्रवत् ॥ एष
च्छेदो विवृत्तीनां यथावालेषुकर्तरी ॥ ७ ॥

नामिकका इन्द्र, उपसर्गोका वरुण और सव अक्षरोंका सूर्य है, स्वर विसर्ग
और यम पुँल्लिग हैं, ड, ज, ण, न, म, य, र, ल, व, यह स्त्रील्लिग हैं शेष अक्षर
नपुंसकल्लिग हैं, संधि चार प्रकारकी होती है लोप, आगम, वर्णविकार, और
प्रकृतिभाव, उनमें लोप जैसे अयक्ष्माः+मा=अयक्ष्मामा इसमें विसर्गोका लोप
हुआ है इत्यादि । आगम जैसे प्रत्यङ्+सोमः=प्रत्यङ्क्सोमः यहां ककारका आगम
हुआ इत्यादि, विकार जैसे आ+इदम्=एदम् इत्यादि यहां आ+ इ के स्थानमें ए
विकार हुआ, प्रकृतिभाव जैसे आशुः शिशांनः इत्यादिमें ज्योंका त्यों रहगया
आकाशमें जैसे बिजली मणिसूत्रवत् स्फुरायमाण होती है, इसीप्रकारसे विवृत्तिका
छेद होना चाहिये जैसे बालोंमें कैंची ॥ ७ ॥

द्वयोस्तु स्वरयोर्मध्ये संधिर्यत्र न दृश्यते ॥

विवृत्तिस्तत्र विज्ञेया यऽईशेति निदर्शनम् २२।२ ॥ ८ ॥

दो स्वरोंके मध्यमें जहां संधि न दीखे वहां विवृत्ति जाननी, जैसे य ईशः ॥ ८ ॥

पिपीलिका पाकवती तथा वत्सानुसारिणी ॥

वत्सानुसंभूता चैव चतस्रस्तु विवृत्तयः ॥ ९ ॥

विवृत्ति चार प्रकारकी होती है पिपीलिका, पाकवती, वत्सानुसारिणी, वत्सा-
नुसंभूता ॥ ९ ॥

पंचरंगाः प्रवर्तते घातनिर्घातवज्रिणः ॥

अहरप्रहरोज्ञेय अइउऋओइति निदर्शनम् ॥ १० ॥

घात, निर्घात, वज्री, अहर, प्रहर यह पांच रंग हैं जैसे अ इ उ ऋ ओ । यह
निदर्शन है ॥ १० ॥

पिपीलिका आद्यंतदीर्घानाभ्याऽआसीदिति निदर्शनम् ३१।१।१३

पाकवत्युभयोर्ह्रस्वा विनऽइन्द्रेति निदर्शनम् ॥ ११ ॥

आदि और अन्तमें दीर्घवाली पिपीलिका विवृत्ति कहाती है, यथा नाभ्याऽआसी-
दन्तरिक्षम् इत्यादि । आदि अन्तमें ह्रस्वपाकवती विवृत्ति होती है, यथा विनऽइन्द्र
इत्यादि ॥ ११ ॥

(२०) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

अन्तेचवत्सानुसृजितातानऽआवोढमश्विनेतिनि० २० । ७४

वत्सानुसारिणीचादौदीर्घाताऽअस्येतिनि० ॥ १२ ॥

अन्तमें दीर्घ वत्सानुसृजिता होती है, तानऽआवोढमश्विना यह उदाहरण है और आदिमें दीर्घ होवे वत्सानुसारिणी होती है ताऽअस्य यह उदाहरण है ॥ १२ ॥

करिणीकुर्विणीचैवहरिणीहारिणीतिच ॥

तथाहंसपदानामपंचैताःस्वरभक्तयः ॥ १३ ॥

करिणी, कुर्विणी, हरिणी, हारिणी और हंसपदा यह पांच स्वरभक्ति हैं ॥ १३ ॥

करिणीरहयोर्योगेकुर्विणीलहकारयोः ॥

हरिणीरषयोर्योगेहारितालऋपकारयोः ॥ १४ ॥

र, ह के योगमें करिणी, लकार हकारके योगमें कुर्विणी, र, प के योगमें हरिणी, ऋ, षकारके योगमें व ल, षकारके योगमें हारिता ॥ १४ ॥

यातुहंसपदानामसातुरेफपकारयोः ॥ १५ ॥

र, ष के योगमें हंसपदा भक्ति होती है ॥ १५ ॥

देवंबर्हि २१।४४ रितिकरिणीउपवल्हेतिकुर्विणी २३ । ४६

हरिणी ११।३६ मरेषसइत्याहुर्हारिणीशतवल्शेतिच ॥ १६ ॥

देवंबर्हि यह करिणी, उपवल्हेति यह कुर्विणी, दर्शतमिति यह हरिणी, शतवल्शेति यह हारिणी ॥ १६ ॥

व्षोर्वषीयसीत्याहुस्तथाहंसपदेतिच ६ । ११ ॥ रलाभ्यांपरऋ

ष्माणोयत्रस्युः स्वरितोदयाः ॥ स्वरभक्तिरसौज्ञेयापूर्वमाक्रम्य

पठ्यते ॥ स्वरभक्तिप्रयुंजानस्त्रीन्दोषान्परिवर्जयेत् ॥ १७ ॥

व्षोर्वषीयसि यह हंसपदा भक्तिका उदाहरण है । र, ल से परे जहां ऋष्माण स्वरितोदय हो इसको स्वरभक्ति जानना, यह पूर्वको आक्रमण कर पढ़ी जाती है, भक्ति प्रयोगके तीन दोषोंको त्याग करे ॥ १७ ॥

इकारंचाप्युकारंचग्रस्तदोषंतथैवच ॥

एतल्लक्षणमाख्यातंयान्नवल्क्येनधीमता ॥ १८ ॥

इकार उकार और ग्रस्तदोष इनका लक्षण बुद्धिमान यान्नवल्क्यने कथन किया है ॥ १८ ॥

सम्यक्पाठस्यसिद्धयर्थशिष्याणांहितकाम्यया ॥

१ हरिणी दर्शतमिति ११ । १६ शतवल्शेति हरिता ५ । ४५

अर्धमात्रास्वरं किंचित्पृथङ् न्यूनं प्रवोच्यते ॥

ऋकारेहकारहृत्कंठमनसानि च ॥

भलीप्रकार पाठकी सिद्धि और शिष्योंके हितकी कामनासे कहा है, अर्धमात्राका स्वर कुछ पृथक् न्यून उच्चारण करै, ऋकार हकारको हृदय कंठ और मनसे उच्चारणकरै ॥ १९ ॥

नैतत्स्वरितपूर्वांगेनापरांगेकथंचन ॥

नस्वरेनचमात्रायांकथंस्वारोविधीयते ॥ २० ॥

यदि कहो कि यह स्वरित पूर्वांग परांग स्वर और मात्रामें जव नहीं तो कैसे स्वरका विधान किया जाय ॥ २० ॥

परांगस्यतुयत्पूर्वपूर्वांगस्यतुयत्परम् ॥

उभयोरद्धसंयोगेस्वारंकुर्याद्विचक्षणः ॥ २१ ॥

संयोगेतुपरंस्वार्य्यपरंसंयोगनायकम् ॥

संयुक्तस्यतुवर्णस्यनस्वार्य्यपूर्वमक्षरम् ॥ २२ ॥

संयोगमें यह स्वर पर और परसंयोगमें नायक कहाता है ऐसा जाना. संयुक्त वर्णका पूर्व अक्षर स्वर नहीं होता ॥ २१ ॥ २२ ॥

उदात्तादनुदात्तेतुवामायाभ्युवआरभेत् ॥

उदात्तात्स्वरितोदात्तौक्रमादक्षिणतो न्यसेत् ॥ २३ ॥

अनुदात्तमें उदात्त इसको वामभूसे आरंभ करे उदात्तसे स्वरित उदात्तको क्रमसे दक्षिणको लावे ॥ २३ ॥

स्वरितादनुदात्तायेप्रचयस्तान्प्रचक्षते ॥

एकस्वरानपिचतानाहुस्तत्त्वार्थचिन्तकाः ॥ २४ ॥

स्वरितसे उत्तरमें अनुदात्त हो तो उसको तत्त्वज्ञाता प्रचय स्वर कहते हैं, अथवा एकस्वर भी कहते हैं ॥ २४ ॥

प्रचयोयत्रदृश्येततत्रहन्यात्स्वरंबुधः ॥

स्वरितःकेवलोयत्रमृदुस्तत्रनिपातयेत् ॥ २५ ॥

जहां प्रचय दिखाई दे बुद्धिमान् वहां स्वरभंग करै और जहां केवल स्वरित हो वहां मृदु निपातन करै ॥ २५ ॥

दुर्बलस्ययथाराष्ट्रंहरतेबलवान्मृपः ॥

एवंव्यंजनमासाद्य अकारोहरतेस्वरम् ॥ २६ ॥

(२२) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता—परिशिष्टभागे—

जैसे बली राजा दुर्बल के राज्यको हरते हैं इसी प्रकार व्यंजनको प्राप्त होकर अकार स्वरको हरणकरता है ॥ २६ ॥

उच्चादुच्चतरंनास्तिनीचात्रीचतरंतथा ॥

अक्षरात्तुल्ययोगाच्चनीचेनीचगतानिच ॥ २७ ॥

उच्चसे उच्च और नीचसे नीच नहीं होता, अक्षर तुल्य योगवाले हैं नीच स्वरको प्राप्त होकर नीचे हो जाते हैं ॥ २७ ॥

स्वरउच्चःस्वरोनीचःस्वरःस्वरितएवच ॥

स्वरप्रधानैस्तैःस्वार्यव्यंजनंतेनसस्वरम् ॥ २८ ॥

स्वरही उच्च स्वर अनुदान्त और स्वरही स्वरित होता है, स्वरही स्वरमें प्रधान है उसीसे व्यंजन स्वरवाला कहाता है ॥ २८ ॥

व्यंजनान्यनुवर्ततेयत्रतिष्ठतिसस्वरः ॥

स्वरप्रधानंत्रैस्वर्यमाचार्याःप्रवदंतिहि ॥ २९ ॥

स्वरकी ओरही व्यंजन अपनी अनुवृत्ति करते हैं, इन तीनोंमें स्वरही प्रधान है यह आचार्य कहते हैं ॥ २९ ॥

मणिवद्व्यंजनंविद्यात्सूत्रवच्चस्वरंविदुः ॥

आचार्याःसममिच्छंतिपदच्छेदंतुपंडिताः ॥ ३० ॥

मणिकी समान व्यंजन और सूत्रकी ससान स्वर है, आचार्य समकी और पंडित पदच्छेदकी इच्छा करते हैं ॥ ३० ॥

स्त्रियोमधुरमिच्छंतिविकृष्टमितरेजनाः ॥

उदात्तनानुवर्ततेनीचंनस्वरितंतथा ॥ ३१ ॥

स्त्री मधुर पदार्थकी और दूसरे जन अव्यक्त शब्दकी इच्छा करते हैं, जो उदात्त अनुदात्त और स्वरितका अनुवर्तन नहीं करते ॥ ३१ ॥

विस्वरंतंविजानीयाद्दीर्घह्रस्वविवर्जितम् ॥ हरिवरुणवरेण्येषुधारा हिपुरुषेषुच ॥ वैश्वानरोनकारे १८।७२ चशेषास्तुस्वरितानराः ।

(स्वरितोरेफवैश्वानरोनकारः शेषाकारःस्वरितानराः) ॥ ३२ ॥

ह्रस्व दीर्घसे वर्जित उसको विस्वर जाने, हरि, वरुण, वरेण्य, धारा, पुरुष इनमें रेफ स्वरितत्वके समान आचरण करता है, वैश्वानर शब्दमें नकार स्वरितत्वकी समान आचरण करता है और नर शब्दमें रेफकोही स्वरितत्व होता है ॥ ३२ ॥

द्वौवरुणौचस्वरितौ उदुत्तमं १२ । २ त्वंवरुण ३३ । ३२ ॥

धारेचैवोरुधारे तु पुरुधारेच दोहने॥मात्रिकंवाद्विमात्रंवास्वरितं
यदिहाक्षरम् ॥ तस्यादितोर्द्धमात्रावैशेषंचपरतोभवेत् ॥ ३३ ॥

उदुत्तमं त्वं वरुण इमं वरुण शब्दके दो वकारोंमें का एक वकारही स्वरितवत् होता है रेफ नहीं, ऊरुधारा इत्यादिमें धा शब्दही स्वरितवत् होता है, एक मात्रा वा दो मात्राका जो अक्षर स्वरित हो तो द्विमात्रिकमें आधी मात्रा उदात्त आधी अनुदात्त शेष स्वरित होता है “यह पाणिनिसे विलक्षण है” ॥ ३३ ॥

नकारान्तेपदेपूर्वैश्मश्रुभिः २५।१ परतः स्थिते ॥

छकारंनप्रयुंजीतजशसंधिसमुच्चरेत् ॥ ३४ ॥

नकारान्त पदके आगे यदि श्मश्रु शब्द हो तो शकारको छकारका प्रयोग न करै ज और शकी सन्धि करै ॥ ३४ ॥

ओकारः २ । १३ प्लुतविज्ञेयः प्लुतमग्राद्वितीयकम् ८।१०॥

लाजीञ्छाची २३।८ तृतीयंचविवेशेति २३।४९ चतुर्थकम् ३५

ओकार प्लुत जानना यथा अग्रा द्वितीयकम् लाजीञ्छाची तीसरा और विवेशेति यह चौथा प्रयोग है ॥ ३५ ॥

अधःस्विदासी २३ । ७४ त्पंचमंचोपरिस्विदासीच्चषष्ठकम् ॥

सप्तमंतुक्त्रिबेस्मारअष्टमंनैवविद्यते ॥ लृकारस्यतुदीर्घत्वंनास्ति

वाजसनेयिनः ॥ ३६ ॥

अधःस्विदासीत् पांचवां और उपरि स्विदासीत् छठा प्रयोग है, सातवाँ त्रिबेस्मार और आठवां प्रयोग नहीं है वाजसनेयी शाखावालोंके मतमें लृकारका दीर्घ नहीं है ॥ ३६ ॥

उच्चस्तानागतेहस्तेस्वरितंनोपपद्यते ॥

अधस्तात्तुयदागच्छेत्स्वरितंनतदाभवेत् ॥ ३७ ॥

हाथके उदात्त मार्गमें प्राप्त होनेसे स्वरित प्रगट नहीं होता, और जब अनुदात्तपनको प्राप्त हो तो स्वरित नहीं होता ॥ ३७ ॥

कचटतपादृश्यंतेसंधिस्थानेषुनित्यशः ॥

स्ववर्गेणैवसंयुक्तामोक्षंकुर्वीततत्रवे ॥ ३८ ॥

क च ट त प यह संधिस्थानमें नित्य दिखाई देते हैं, अपने वर्णवालोंसे संयुक्त होकर फिर पृथक् नहीं होते ॥ ३८ ॥

(२४) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

तकारांतेपदेपूर्वसकारेपरतःस्थिते ॥

प्रत्यारंभनकुर्वीतपापावितिनिदर्शनम् ॥ ३९ ॥

जब पूर्वमें तकारान्त पद आगे सकार स्थित हो तो प्रत्यारंभ न करे यथा पापाविति ॥ ३९ ॥

ककारांतेपदेपूर्वसकारेपरतःस्थिते ॥

खसवर्णविजानीयाद्विखक्सेतिनिदर्शनम् २१।२६ ॥४०॥

ककारान्त पद पूर्वमें और आगे सकार हो तो खसवर्ण जानै यथा भिखक्सेन इति ॥ ४० ॥

तकारांतेपदेपूर्वचवर्गेपरतःस्थिते ॥

मोक्षंतत्रापिकुर्वीत यच्चशेपेनिदर्शनम् ६।१७ ॥४१॥

नकारान्त पद पूर्वमें आगे चवर्ग स्थित हो तो वहां वर्ण मोक्ष करै यथा यच्च शेपे यह दृष्टान्त है ॥ ४१ ॥

ङकारांतेपदेपूर्व सकारेपरतःस्थिते ॥

कसवर्णविजानीयात्प्राङ्क्सोमेतिनिदर्शनम् १८।३ ॥४२॥

पूर्वमें ङकारान्त पद हो आगे सकार स्थित हो तो उसका सवर्णी 'क' जाना, प्राङ्क्सोमः यह उदाहरण है ॥ ४२ ॥

टकारांतेपदेपूर्वसकारेपरतः स्थिते ॥

टसवर्णविजानीयात्सम्राट्संभृतेतिनिदर्शनम् ३९।४ ॥४३॥

जो पूर्वमें टकारान्त पद हो आगे सकार स्थित हो तो टकार सवर्णी हो यथा सम्राट् संभृत इति ॥ ४३ ॥

तकारांतेपदेपूर्वसकारेपरतःस्थिते ॥

थसवर्णविजानीयात्तत्सवितुर्निदर्शनम् ३।३५ ॥४४॥

तकारान्त पद पूर्वमें हो आगे सकार हो तो 'थ' का सवर्णी हो तत्सवितुर् यह उदाहरण है ॥ ४४ ॥

नकारांतेपदेपूर्वसकारेपरतःस्थिते ॥

तसवर्णविजानीयात्त्रिन्तसमुद्रेतिनिदर्शनम् १३।३२।४५

१ नितन्माथ्यन्दिनीयानां संस्थानत्वात्तयोर्द्वयोः ।

सम्भानेपि द्वितीयं स्यादापस्तम्बस्य यन्मतम् ॥ इत्यधिकः पाठः ।

नकारान्त पद पूर्वमें हो सकार आगे हो तो त सवर्णी हो, यथा त्रीन्तसमुद्रान् यह उदाहरण है ॥ ४५ ॥

पकारान्तेपदेपूर्वे शकारेपरतःस्थिते ॥

फसवर्णविजानीयादनुष्टुप्छारदीतिनिदर्शनम् १३।५७॥४६॥

पकारान्त पद पूर्वमें हो आगे शकार हो तो फ सवर्णी जनि अनुष्टुप् शारदी यह उदाहरण है ॥ ४६ ॥

मकारान्तेपदेपूर्वेसवर्णेपरतःस्थिते ॥

मसवर्णविजानीयादिमम्मेतिनिदर्शनम् २१।१ ॥ ४७ ॥

मकारान्त पदके आगे सकार हो तो सवर्णी मकार हो 'इमम्मे' यह उदाहरण है ॥ ४७ ॥

वर्णेतुमात्रिकेपूर्वेअनुस्वारोद्विमात्रिकः ॥

द्विमात्रेमात्रिकोज्ञेयः संयोगाद्यश्चयोभवेत् ॥ ४८ ॥

एक मात्रावाले वर्णके आगे द्विमात्रिक अनुस्वार हो तो द्विमात्रिक द्विमात्रावाला जानो, जिसका जो संयोग हो ॥ ४८ ॥

अनुस्वारोद्विमात्रः स्याद्वर्णव्यंजनादिगः ॥

ह्रस्वाद्वायदिवादीर्घाद्देवानां ह्रदयेभ्य इति ० । १६।४६।४९

अनुस्वार दो मात्रावाला हो ऋवर्ण व्यंजनके पूर्वमें प्राप्त हुआ हो तो द्विमात्रिक होता है, ह्रस्व वा दीर्घ चाहै किसीसे परे हो देवानां ह्रदयेभ्यः यह उदाहरण है ॥ ४९ ॥

अनुस्वारस्योपरिष्ठात्संवृतं यत्र दृश्यते ।

दीर्घतंतुविजानीयाच्छ्रोताग्रावाणेतिनिदर्शनम् ६।२६॥५०॥

अनुस्वारके आगे यदि संवृत प्रयत्नवाला वर्ण दीखे तो उसे दीर्घ जाने, श्रोता ग्रावाणः यह उदाहरण है ॥ ५० ॥

अनुस्वारस्योपरिष्ठात्संयोगो यत्र दृश्यते ॥

ह्रस्वंतंतुविजानीयात्संस्थेतिनिदर्शनम् ॥ २९।२९॥५१॥

अनुस्वारके ऊपर जहां संयोग दीखे उसे ह्रस्व जानै संस्था यह दृष्टान्त है ॥ ५१ ॥

अनुस्वारश्चयोदीर्घादक्षराद्योभवेत्परः ॥

सतुह्रस्वइतिज्ञेयोमंत्रेष्वेव विभाषया ॥ ५२ ॥

(२६) वाजसनेयिश्चशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परीशिष्टभागे-

दीर्घ अक्षरसे परे जो अनुस्वार हो, वह विकल्प करके मंत्रोंमें ह्रस्व होता है ॥ ५२ ॥

ओभावश्चविवृत्तिश्चशपसारेफएवच ॥

जिह्वामूलमुपध्माचगतिरष्टविधोऽम्भणः ॥ ५३ ॥

ओभाव, विवृत्ति, श, ष, स, रेफ, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, यह आठ प्रकारकी ऊष्माकी गति है ॥ ५३ ॥

यद्याभावप्रसंधानमुकारादिपरंपदम् ॥

स्वरांतंतादृशंविद्याद्यदन्यद्व्यक्तमूष्मणः ॥ ५४ ॥

ओभावके आगे यदि उकारादि पद हो तो उसे स्वरान्त जाने और इससे अन्यत्र ऊष्माका ओभाव जानै ॥ ५४ ॥

उंभावादुत्थितश्चोष्मातांतुकेलिविनिर्दिशेत् ॥

विवृत्तंप्रतियाऊष्माविज्ञेयाविकटानना ॥ ५५ ॥

ओभावको प्राप्त हुई ऊष्माकेलि कहाती है, और विवृत्तिके आगे जो ऊष्मा हो उसे विकटानना कहते हैं ॥ ५५ ॥

लीढातिलीढविद्युच्चशपसेषुप्रकीर्तिताः ॥

जिह्वामूलेचरेफेचविज्ञेयाविठकाशंठा ॥ ५६ ॥

लीढ अतिलीढ और विद्युत् यह क्रमसे श ष स में कही है, अर्थात् नाम है जिह्वामूलीय और रेफ यह विठक और शंठा नामवाले हैं ॥ ५६ ॥

उपध्मानीयसहितांपुष्पिणींतांविनिर्दिशेत् ॥

अन्यत्रयाभवेदूष्मासुलभांतांविनिर्दिशेत् ॥ ५७ ॥

उपध्मानीयके सहित ऊष्माको पुष्पिणी कहते हैं, इसके शिवाय अन्य ऊष्मा सुलभा कहाती है ॥ ५७ ॥

पादाद्यंतंपदाद्यंतंतथावग्रहकालिकम् ॥

ईषत्स्पृष्टंविजानीयात्तस्मिन्कालेतुकारयेत् ॥ ५८ ॥

पादके वा पदके अन्तके अक्षर वा अवग्रह स्वरके अक्षरको ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न जानै, यह उस उच्चारण कालमें ही जानै ॥ ५८ ॥

पादादौचपदादौचसंयोगावग्रहेषुच ॥

जःशब्दइतिविज्ञेयोयोन्यःसयइतिस्मृतः ॥

उपसर्गपरोयस्तुपदादिरपिदृश्यते ॥ ५९ ॥

पादकी आदिमें वा पदकी आदिमें वा संयोग और अवग्रहमें 'य' का 'ज' उच्चारण करे, इससे अन्यको यकारही उच्चारण करना चाहिये जो उपसर्गसे परे और पदकी आदिमें दीखे ॥ ५९ ॥

ईषत्पृष्ठं यथा विद्युत्पदच्छेदात्परं भवेत् ॥

त्वदर्थवाचिनौ वो वां वा वे यदि निपातसे ॥ ६० ॥

वह अक्षर ईषत्पृष्ठ प्रयत्न हैं, यथा विद्युत् परन्तु पद और छन्द करनेपर ही, त्वदर्थ (तुम्हारे) अर्थ वाची वो वां वा वे यदि निपातसे हुए हैं ॥ ६० ॥

आदेशश्च विकल्पार्था ईषत्पृष्ठा इति स्मृताः ॥

विभाषयायकारः स्यात्तथानेति पदात्परः ॥ ६१ ॥

तो इनको ईषत्पृष्ठ प्रयत्न जानै; और निपातन किये विकल्प अर्थवाले आदेश हैं क्योंकि पाणिनिशास्त्रमें भी आदेश विकल्पार्थ कहे हैं, नकारके आगे यदि यकार हो तो उसके स्थानमें अकारका उच्चारण विकल्पसे होता है ॥ ६१ ॥

भवतीत्यपि पूर्वैव तथा च सपदादपि ॥

यदेवलक्षणं यस्य वकारस्यापितद्भवेत् ॥ ६२ ॥

यत्र यत्र विशेषः स्यादिदानीं ससकथ्यते ॥

वकारस्त्रिविधः प्रोक्तो गुरुर्लघुर्लघूत्तरः ॥ ६३ ॥

और पूर्वमें तथा सपदके आगे भी जाना जो यकारका है वही वकारका जानो, जो जहां विशेष है सो अवश्य कहते हैं वकारके तीन भेद हैं गुरु लघु लघूत्तर ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

आदौ गुरुर्लघुर्मध्ये पदान्ते च लघूत्तरः ॥ ६४ ॥

आदिमें गुरु मध्यमें लघु और पदान्तमें हो तो लघूत्तर कहाता है ॥ ६४ ॥

यवर्णस्त्रिविधः प्रोक्तो गुरुर्लघुर्लघूत्तरः ॥

आदौ गुरुर्लघुर्मध्ये पदान्ते तु लघूत्तरः ॥ ६५ ॥

यकारके भी तीन भेद हैं गुरु लघु लघूत्तर आदिमें गुरु मध्यमें लघु और पदान्तमें लघूत्तर कहाता है ॥ ६५ ॥

सन्धिजौ तु पदान्तीयावुपसर्गपरौ लघू ॥

अथ मास न शब्देभ्यो विभाषा भ्रूते यवौ ॥ ६६ ॥

(२८) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

सन्धि करनेसे हुआ पदान्तका, उपसर्गसे आगे हो तो लघु मा स-न शब्दोंसे परे वा द्विरुक्तिमें विकल्प करके य लघुतर जान्ना ॥ ६६ ॥

पञ्चमादुत्तरोयोवोयदिचैकपदेभवेत् ॥

संहितायांलघुःसोपिपदकालेगुरुर्भवेत् ॥ ६७ ॥

पांचवें अक्षरसे आगे य, व, यदि एक पदमें हों तो संहितासे यह लघु हुएभी पदके समय गुरु हो जाते हैं ॥ ६७ ॥

हकारेरेफसंयुक्तऋवर्णोदयएववा ॥

सुस्पृष्टंविजानीयाद्यकारोनान्ययुग्यदि ॥ ६८ ॥

(जात्य स्वरितमें जहां वकार हो तो दोनोंकोही निक्षेप करै यथा वायव्ये और जात्य स्वरितमें यकार हो तो दोनोंका क्षेप करै यथा सदस्यै ७ । ४९ यह उदाहरण है पहले कह चुके हैं) रेफसंयुक्त हकार और ऋवर्णमें सुस्पृष्ट प्रयत्न जाने यदि यकार दूसरेमें संयुक्त न हो तो ॥ ६८ ॥

उपांशुस्वरितंचैवयोधीतेवित्रसन्नपि ॥

अपरूपसहस्राणांसंदेहेषुप्रवर्तते ॥ ६९ ॥

जो अप्रकाशित तथा बहुत सहजमें तथा शीघ्रतासे व्याकुलतापूर्वक पड़ता है, वह सहस्रों भ्रष्टरूपोंके सन्देहोंमें पड़ता है ॥ ६९ ॥

पंचविद्यानगृह्णतिजडाःस्तब्धाश्चयेनराः ॥

आलसाश्चातिरोगाश्चयेषांचविस्मृतंमनः ॥ ७० ॥

जड़, स्तब्ध, आलसी, रोगी, और भूलनेवाले यह पांच विद्याको नहीं प्राप्त करते ॥ ७० ॥

अहेरिवगणाद्भीतःसंमानान्नरकादिव ॥

राक्षसीभ्यश्चैवस्त्रीभ्यःसविद्यामधिगच्छति ॥ ७१ ॥

जो संघसे सर्पकी समान सन्मानसे नरककी समान स्त्रियोंसे राक्षसियोंकी समान डरता है, वही विद्याको प्राप्त होता है ॥ ७१ ॥

नभोजनविलंबीस्यान्नचनारीनिबंधनः ॥

सुदूरमपिविद्यार्थीत्रिजेद्वरुडहंसवत् ॥ ७२ ॥

भोजन करनेमें देर न करे, स्त्रियोंके वधनमें न रहे. और गुरुस्थान दूर होवे तो भी गरुड हंसकी समान अतिशीघ्र वहां जाएहुँचे ॥ ७२ ॥

यथाखनन्खनित्रेणनरोवार्यधिगच्छति ॥

तथागुरुगतांविद्यांशुश्रूषुरधिगच्छति ॥ ७३ ॥

जैसे कुदालसे खोदता हुआ मनुष्य जलको प्राप्त करता है, इसी प्रकार श्रूषुषा करनेवाला गुरुकी विद्याको प्राप्त करलेता है ॥ ७३ ॥

सुखार्थीचेत्यजेद्विद्यांविद्यार्थीचेत्यजेत्सुखम् ॥

सुखिनश्चकुतोविद्यासुखंविद्यार्थिनःकुतः ॥ ७४ ॥

जो सुखकी इच्छा करे वह विद्या नहीं पढ सकता, जो विद्यार्थी होना चाहै वह सुखकी अभिलाषा न करे, सुखियोंको विद्या कहाँ और विद्यार्थियोंको सुख कहाँ ७४ ॥

गुणिताशतशोविद्यासहस्रावर्तिताप्नुनः ॥

आगमिष्यतिजिह्वाग्रेस्थलान्निम्नमिवोदकम् ॥ ७५ ॥

सैकड़ोंवार गुनी हुई सहस्रोंवार आवृत्ति की हुई विद्या जिह्वाके अग्रभागमें उपस्थित होती है, जैसे नीचे स्थानसे जल ॥ ७५ ॥

शतेनगुणिताविद्यासहस्रेणचतिष्ठतिः ॥

शतानांचसहस्रेणप्रत्यंचमवतिष्ठति ॥ ७६ ॥

सौ आवृत्तिसे गुणित होती, और सहस्रवार आवृत्तिसे स्थित रहती है और लक्ष आवृत्तिसे पूजित रहती है ॥ ७६ ॥

जलमभ्यासयोगेनशिलायांकुरुतेक्षयम् ॥

कर्कशानांमृदुस्पर्शकिमभ्यासान्नसाध्यते ॥ ७७ ॥

जैसे जलके अभ्याससे शिलाओंमें मार्ग पड़जाते हैं, कठिन वस्तुओंके स्पर्शमें मृदुता होती है ऐसेही अभ्याससे क्या २ सिद्ध नहीं होता ॥ ७७ ॥

गुरुश्रूषुषयाविद्यापुष्कलेनधनेनवा ॥

अथवाविद्ययाविद्याचतुर्थनोपलभ्यते ॥ ७८ ॥

गुरुकी महती सेवासे वा अधिक धनसे अथवा विद्याके बदलनेसे विद्या प्राप्त होती है ॥ ७८ ॥

शुश्रूषारहिताविद्याह्यल्पमेधागुणैः सह ।

बंध्याचयौवनीतस्यानविद्याफलिनीभवेत् ॥ ७९ ॥

(३०) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता—परिशिष्टभागे—

जो विद्या गुरुकी शुश्रूषासे रहित हैं, तथा अल्पबुद्धि और अल्प गुणसे ग्रहण की हुई यौवनवती बन्ध्याकी समान वह विद्या फलवती नहीं होती ॥ ७९ ॥

हयानामिवजात्यानामर्धमात्रार्द्धशायिनाम् ॥

नहिविद्यार्थिनां निद्राचिरं नेत्रेषु तिष्ठति ॥ ८० ॥

जैसे जात्य संज्ञक घोड़े अर्धमात्रापर्यन्त शयन करते हैं, इसी प्रकार विद्यार्थियोंके नेत्रोंमें चिरकालतक निद्रा स्थित नहीं रहती ॥ ८० ॥

यथापिपीलिकैः पांसुर्वल्मीकं क्रियते महान् ॥

नतत्र बलसामर्थ्यमुद्यमस्तत्र कारणम् ॥ ८१ ॥

जैसे पिपीलिका धूरिके कणोंसे बड़ी बल्मीक बनालेती है उसमें बलकी बात नहीं है, केवल इसमें उद्योगही कारण है, ऐसेही उद्योगसे विद्या आती है ॥ ८१ ॥

अंजनस्य क्षयं दृष्ट्वा वल्मीकस्य तु संचयम् ॥

अवध्यं दिवसं कुर्याद्दानाध्ययनकर्मसु ॥ ८२ ॥

सुरमेंका क्षय और बमईका संचय देखकर दान अध्ययनके कर्मोंमें निरन्तर समय व्यतीत करे ॥ ८२ ॥

अन्नं व्यंजनयोर्भागस्तृतीयमुदकस्य च ॥

वायोः संचारणार्थाय चतुर्थमुपकल्पयेत् ॥ ८३ ॥

उदरके चार भाग कल्पना करके दोभाग अन्न व्यंजनके तीसरा जलका और चौथा वायु संचरणका रखै ॥ ८३ ॥

हकारं पंचमैर्युक्तमन्तस्थैश्चापि संयुतम् ॥

औरसंतं विजानीयात्कंठ्यमाहुरसंयुतम् ॥ ८४ ॥

हकार पांचमें अक्षर तथा अन्तस्थ अक्षरसे संयुक्त हो, तो उसको उरस्थ जाने, और असंयुक्त हकारका स्थान कंठ है ॥ ८४ ॥

हकारो यत्र पूर्वस्थो अन्तस्थाद्यो भवेत्परः ॥

पदकाले विद्युज्येत संहितायां स औरसः ॥ ८५ ॥

जहां हकार पूर्वमें स्थित हो और अन्तस्थसे परे हो जो पदके समय पृथक् हो जाय, वह संहितामें हृदयस्थानी कहा है ॥ ८५ ॥

मेघदुंदुभिनिर्घोषो ज्ञायते पयसो हृदात् ॥

एवं नादं प्रयोक्तव्यं सिंहस्य रुदितं तथा ॥ ८६ ॥

जैसे हृद (कुंड) से जलका मेघ दुन्दुभीकी समान शब्द होता है, अथवा जैसे सिंह गरजता है, इस प्रकार नाद करना चाहिये ॥ ८६ ॥

मासेभाद्रपदेमेघाः शब्दकुर्वतियादृशम् ॥

एवंगह्वरमासाद्यशुक्रं ३ । १६ दुदुह्वेतिनिदर्शनम् ॥ ८७ ॥

भादों मासमें मेघ जैसा शब्द करते हैं, इसी प्रकार एकान्तमें शब्दोच्चारण करे 'शुक्रं दुदुहे' यह जैसे उदाहरण है ॥ ८७ ॥

शेषाणां वानरायुद्धमुत्पतंतिपतंति च ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्या इहेहैषान्निदर्शनम् ॥ ८८ ॥

और शेष अक्षरोंको जैसे वानर युद्धमें उछलते कूदते हैं इस प्रकारसे प्रयोग करे यथा 'इहेहैषां' ॥ ८८ ॥

यथा पुत्रवतीस्नेहाच्चुंबते निजमौरसम् ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्या युञ्जानेतिनिदर्शनम् १० । ३२ ॥ ८९ ॥

जैसे पुत्रवती स्त्री प्रेमसे अपने पुत्रका मुख चूमती है, इस प्रकारसे वर्णोंका प्रयोग करे जैसे 'युञ्जानः' १० । ३२ ॥ ८९ ॥

दर्दुरोदरदेशौ तु प्रकुल्येते पुनर्यथा ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्या अपांफेनेतिनिदर्शनम् ११ । ७१ ॥ ९० ॥

जैसे भेड़कका पेट बारंवार फूलता है इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करे 'अपांफेने' यह उदाहरण है ॥ ९० ॥

यथा भाराभरक्रांतानि श्वसंति नराभुवि ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्या अद्भ्यः संभृत इत्यपि ३१ । १७ ॥ ९१ ॥

जैसे भारवाले पुरुष बारंवार श्वास लेते हैं, इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करे, यथा 'अद्भ्यः संभृतः' इति ॥ ९१ ॥

कुक्कुटः कामलुब्धश्च ककारद्वयमुच्चरेत् ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्याः कुक्कुटोसीतिनिदर्शनम् १ । १६ ॥ ९२ ॥

जैसे कामसे लुब्ध हुआ कुक्कुट दो ककारका उच्चारण करता है इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करे 'कुक्कुटोऽसि' यह उदाहरण है ॥ ९२ ॥

वडवाचहयंहृष्टायोर्निविकुरुते यथा ॥

एवंवर्णाः प्रयोक्तव्याः सदुंदुभेतिनिदर्शनम् २८ । ५५ ॥ ९३ ॥

(३२) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

जैसे घोड़ी घोड़ेको देखकर अपनी योनिको चालन करती है, इसी प्रकार
वर्णोंका प्रयोग करै, 'सुदुन्दुभे' यह उदाहरण है ॥ ९३ ॥

यथाकामातुरानारीशब्दकुर्यादिनेदिने ॥

तच्छब्दंकुरुतेप्राज्ञःसिंहासिनिदर्शनम् ५। १२ ॥ ९४ ॥

जैसे कामातुरा स्त्री दिन दिन शब्द करती है इसी प्रकार शब्द करै, यथा
'सिंहासि' ॥ ९४ ॥

पक्षौवितत्यखेगृध्रोभ्रान्त्यासंकुच्यतिष्ठति ॥

एवंवर्णाःप्रयोक्तव्यावार्ध्नीनसोनिदर्शनम् २४।३९ ॥ ९५ ॥

जिस प्रकार गृध्र आकाशमें पक्ष विस्तृत करके भ्रमण करता स्थित होता है
इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै, यथा 'वार्ध्नीनसः' यह उदाहरण है ॥ ९५ ॥

रंगेचैवसमुत्पन्नेनोग्रसेत्पूर्वमक्षरम् ॥

स्वरंदीर्घप्रयुञ्जीतपश्चात्त्रासिक्वमाचरेत् ॥ ९६ ॥

रंगके उत्पन्न होनेसे पहले अक्षरको प्राप्त न करै, दीर्घ स्वरका प्रयोग करके पीछे
अनुनासिक उच्चारण करै ॥ ९६ ॥

यथासौराष्ट्रिकानारीअराँइत्यभिभाषते ॥

एवंरंगःप्रवक्तव्योङ्कारःपरिवर्जितः ॥ ९७ ॥

जैसे सौराष्ट्र देशकी स्त्री अराँ इस प्रकारका भाषण करती है, इस प्रकारसे
रंगका प्रयोग करै ङकारको छोड़कर ॥ ९७ ॥

द्विमात्रिकोमात्रिकोवानासामूलंसमाश्रितः ॥

अंतेप्रयुज्जतेरंगःपंचमैःसानुनासिकः ॥ ९८ ॥

द्विमात्रिक वा एकमात्रिक नासिकामूलमें आश्रित होनेसे अन्तमें रंगका प्रयोग
होता है, और पांचवें वर्णको अनुनासिक होता है ॥ ९८ ॥

अनंतरंमकारस्ययोरंगस्तत्ररंज्यते ॥

सर्वानुनासिकंविद्यादेषावध्योपधानिका ॥ ९९ ॥

मकारके अनन्तर जो रंग अक्षर हो वह सर्वानुनासिक जाने यह वध्योपधानिक
संज्ञा है ॥ ९९ ॥

यरलवशषसहरज्यतेचोपधानिका ॥

वर्गातिरंगतेयस्तुसर्वैः सर्वानुनासिका ॥ १०० ॥

य र ल व श ष स ह यह रंग अक्षरके संग बोलेजायँ उसको वध्योपधानिका कहते हैं, वर्गान्त्रमें जो रंग है वह सबके द्वारा सर्वानुनासिक कहा जाता है ॥ १०० ॥

नासादुत्पद्यतेरंगःकांस्येनसमनिःस्वनः ॥

मृदुश्चैवदिमात्रःस्याद्वृष्टिमान्स्यान्निदर्शनम् ७ । १०१ ॥ १ ॥

कांसीकी समान शब्दवाला रंग नासिकासे उत्पन्न होता है, जो मृदु हो वह दिमात्रिक होता है 'वृष्टिमान् इवेति' यह उदाहरण है ॥ १ ॥

यथाव्याघ्रीहरेत्पुत्रान्दंष्ट्राभिर्नचपीडयेत् ॥

भीतापतनभेदाभ्यातद्वर्णान्प्रयोजयेत् ॥ २ ॥

जैसे व्याघ्री डाढ़ोंसे पुत्रोंको पीड़ा न देती हुई हरण करती है, इस प्रकार स्वलित न करता हुआ वर्णोंको उच्चारण करे ॥ २ ॥

मधुरंचनचाव्यक्तंव्यक्तंचापिनपीडितम् ॥

सनाथस्यैकदेशस्यनवर्णाःसंकरंगताः ॥ ३ ॥

वाक्य मधुर हो पर अस्फुट न हो स्फुट हो परन्तु दूसरे वर्णोंसे पीडित न हो सब पूरे उच्चारण कियेजायँ संकर न होजायँ ॥ ३ ॥

यथासुमत्तनागेंद्रःपदात्पदंनिधापयेत् ॥

एवंपदंपदाद्यंतंदर्शनीयंपृथक्पृथक् ॥ ४ ॥

जैसे मत्त हाथी पदके उपरान्त पद रखता है, इस प्रकारसे पदपदान्त पृथक् पृथक् दिखाने चाहिये ॥ ४ ॥

गीतीशीघ्रीशिरःकंपीयथालिखितपाठकः ॥

अनर्थज्ञोत्पकंठश्चपडतेपाठकाधमाः ॥ ५ ॥

गीतसा पढ़ना, शीघ्रतासे पढ़ना, शिर कंपितकरके पढ़ना, जैसा शुद्धाशुद्ध लिखा वैसा पढ़ना, अर्थका न जाना, उत्पकंठ होना यह छः प्रकारके अधम पढ़नेवाले हैं ॥ ५ ॥

माधुर्यमक्षरव्यक्तिःपदच्छेदस्तुसुस्वरः ॥

धैर्यलयसमत्वंचपडतेपाठकागुणाः ॥ ६ ॥

मधुरता, अक्षरोंकी स्फुटता, पदच्छेद करना, स्वरसे पढ़ना, धीरता लय होना यह छः पढ़नेवालोंके गुण हैं ॥ ६ ॥

चतुरक्षरपदकंचनिवर्ततपुनःपुनः ॥

आवर्ततेपदंयच्चद्विस्त्रिभ्रडितंहितम् ॥ ७ ॥

(३४) वाजसनेयिश्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

चार छः अक्षरोंको बारंवार आवर्तित करे जो पद दो तीन बार आवृत्ति किया जाय वह आम्रेडित कहाता है ॥ ७ ॥

यथाधाम्नेधाम्नेतियजुषेयजुषेतिनिदर्शनम् १ । ३० ॥

हीयतेवर्धतेचापिपदंयत्रकृशोदरम् ॥

उपचारःसविज्ञेयउभेसु १४।४३ श्रद्धेतिनिदर्शनम् ॥ ८ ॥

यथा धाम्ने धाम्ने । यजुषे यजुषे यह उदाहरण हैं जिस प्रकार उदर कृश होकर बढ़ता सुकडता है ऐसा जो पद उच्चारण हो वह उपचार कहाता है, 'उभेसुश्चन्द्र' यह उदाहरण है ॥ ८ ॥

अथसप्तविधाःसंयोगपिंडाः ।

अब सात प्रकारके संयोगपिण्ड कहते हैं ।

अयस्पिण्डोदारुपिण्डऊर्णापिण्डोज्वालापिण्डोमृत्पिण्डोवायुपिण्डोवज्रपिण्डश्चेति ॥ यमान्विद्यादयःपिंडान्सांतस्थंदारुपिण्डवत् ॥

अंतस्थयमवर्जतुऊर्णापिण्डंविनिर्दिशेत् ॥ १ ॥

अयस्पिण्ड, दारुपिण्ड, ऊर्णापिण्ड, मृत्पिण्ड, ज्वालापिण्ड, वायुपिण्ड और वज्रपिण्ड यह सात पिण्ड हैं । यमोंको अयःपिण्ड, सान्तस्थोंको दारुपिण्ड, यमरहित अन्तस्थोंको ऊर्णापिण्ड जानै ॥ १ ॥

अंतस्थयमसंयोगेविशेषो नोपलभ्यते ॥

अशरीरंयमंविद्यादंतस्थंपिण्डनायकम् ॥ २ ॥

अन्तस्थ और यमके संयोगोंमें विशेष नहीं जाना जाता, यमको अशरीर और अन्तस्थको पिण्डनायक जाने ॥ २ ॥

ज्वालापिंडान्सनासिक्थान्सानुस्वारांस्तुमृन्मयान् ॥

सोपध्मावायुपिंडाश्चजिह्वामूलेतुवज्रिणः ॥ ३ ॥

नासिक्थ वर्णोंको ज्वालापिण्ड, स्वरोंको मृन्मयपिण्ड जाने, उपध्मानियोंको वायुपिण्ड और जिह्वामूलियोंको वज्रपिण्ड जाने ॥ ३ ॥

अयःपिण्डोनामयथा । अग्निः २३ । १७ पंक्तीः २७ । २० ।

तनञ्जि १ । ४ दारुपिण्डोनामयथा । अश्व-२४ । १ सूय-३९ ।

विश्व्राजनस्यइतिभवति ५ । २८ । तत्रऊर्णापिण्डोनामयथा ॥

अस्मिन् ३ । १ यस्मिन् २० । ७८ अमुष्मिन् १७ । २ इति

भवति ॥ तत्रज्वालापिंडोनामयथा । ब्रह्म १३ । ३ वह्निमतम्
१ । २ गृह्णामीतिभवति । तत्रमृत्पिंडोनामयथा ॥ सु० १९।२९
स्थाम् । स० स्कतारः । स० स्वर्तइति । तत्रवायुपिंडोनामयथा ।
देवसवितः १ । १ युञ्जानः प्रथमम् ११ । १ प्रादिवः ककुत्सुतमिति भ
वति ॥ तत्रवज्रपिंडोनामयथा । इष्कृतिः १२।८३ निष्कृतिः
ऋक्सामयोः ४ । ९ । इतिभवति ॥ प्रथमेनपकारेण सकारेणैव
संयुतम् ॥ एतत्स्वरंसमासाद्यअग्निष्वात्तानिदर्शनम् १९।६१ ॥ ४ ॥

अयःपिण्ड जैसे अग्नीः इत्यादि, दारुपिण्ड जैसे अश्वः इत्यादि, ऊर्णापिण्ड जैसे
यस्मिन् इत्यादि, ज्वालापिण्ड जैसे ब्रह्मा इत्यादि, मृत्पिण्ड जैसे स०स्थाम् इत्यादि,
वायुपिण्ड यथा देवसवितः इत्यादि, वज्रपिण्ड जैसे इष्कृतिः इत्यादि । यदि प्रथम
पकारका सकारसे संयोग हो तो इस स्वरसे 'अग्निष्वात्ताः' यह प्रयोग होता है ॥ ४ ॥

प्रथमेनठकारेणथकारेणैवसंयुतम् ॥

एतत्स्वरंसमासाद्यअधिष्ठाननिदर्शनम् १७।१८ ॥ ५ ॥

प्रथम ठकार और थकारके संयोगसे 'अधिष्ठान' उदाहरण होता है, कहीं पकार
ठकारका संयोग ऐसा लिखा है ॥ ५ ॥

प्रथमेनणकारेणनकारेणैवसंयुतम् ॥

एतत्स्वरंसमासाद्यत्रिणवत्रयस्त्रिंशावितिनिदर्शनम् १०१४।६

पहले णकारका नकारसेही संयोग होय तो इस स्वरसे त्रिणवत्रयस्त्रिंश, यह
स्वर होता है ॥ ६ ॥

प्रथमेनैवरंगेणनकारेणैवसंयुतम् ॥

एतद्रजितमासाद्यवृष्टिमानितिनिदर्शनम् ७।४६ ॥ ७ ॥

पहले रंगका नकारसे संयोग हो तो इस रंगको प्राप्त होकर 'वृष्टिमाँ २ ॥'
उदाहरण होता है ७ । ४० ॥ ७ ॥

एतेककारादयोमकारपर्यवसानाः कृष्णाव्याख्याताः । शनैश्चरदै
वत्याः । चत्वार्यंतस्थायरलवाः कपिलवर्णाः अग्निदेवत्याः । चत्वा
र्युष्माणः शषसहा अरुणवर्णाः आदित्यदेवत्याः ॥ त्रयस्त्रिंश-
द्वयंजनानिस्पर्शांतरस्थालुष्माणश्चेति । चतुर्विधंकरणम् ॥ स्पष्ट-

(३६) राजसनेयिश्चीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परिशिष्टभागे-

मस्पृष्टंसंवृतं विवृतं चेति ॥ संवृतो घोषा विवृता अघोषाः । विठं शति
घोषास्ते गजडदवाघझढधभाङ्जणनमाः यरलवाश्चेति । त्रयोद-
श अघोषास्ते कचटतपाः खछठथफाः शपसाश्चेति । पद्धिधमास्य
प्रयत्नम् ॥ संवृतं विवृतमस्पृष्टं स्पृष्टमीषत्स्पृष्टं चार्द्धस्पृष्टं चेति ।
तत्र । अकारः संवृतो ज्ञेय इतरे विवृताः स्वराः ॥ सर्वे च ते स्युरस्पृष्टाः
स्पर्शास्पृष्टा भवन्ति हि ॥ ८ ॥

यह ककारसे लेकर मकारपर्यन्त २५ स्पर्श वर्ण कुष्णवर्ण शनैश्चर देवतावाले
हैं, चार अन्तस्थ यरलव कपिलवर्ण अग्नि देवतावाले हैं, चार ऊष्माण शपसह अरु
णवर्ण आदित्य देवतावाले हैं, इस प्रकार स्पर्श ऊष्म अन्तस्थ यह ३३ व्यंजन हैं ।
चार प्रकारका करण है स्पृष्ट अस्पृष्ट संवृत विवृत, संवृत घोष और विवृत अघोष
हैं । बीस वर्ण घोष प्रयत्नवाले हैं वे-गं ज ड द व, घ झ ढ ध भ, ङ ञ ण न म,
य र ल व, तेरह अघोष हैं, क च ट त प, ख छ ठ थ फ, श ष स, आस्य प्रयत्न छः
प्रकारका है संवृत, विवृत अस्पृष्ट, स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट और अर्धस्पृष्ट । अकारका संवृत
प्रयत्न और सब स्वर विवृत प्रयत्नवाले हैं, और यह सबही अस्पृष्ट हैं स्पर्श वर्ण
स्पृष्ट प्रयत्नवाले हैं ॥ ८ ॥

ईषत्स्पृष्टास्तथान्तस्था ऊष्माणोर्द्धस्पृष्टाः स्वराः ॥

सामान्यं भजते वर्णः संस्थानकरणस्य हि ॥ ९ ॥

अन्तस्थ ईषत्स्पृष्ट और ऊष्माण अर्धस्पृष्ट हैं, यह वर्ण सामान्यतासे अपने करण,
स्थानको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥

ऋलोर्मध्यै भवत्यर्धमात्रारे फलकारयोः ॥

तस्मादस्पृष्टानस्यादृलकारनिरूपणे ॥ १० ॥

ऋ लके मध्यमें रेफ लकारकी आधी मात्रा है, इससे ऋ लके निरूपणमें
अस्पृष्टता नहीं होती ॥ १० ॥

वर्गाणां प्रथमा द्वितीयाः शपसहाश्चाघोषा घोषास्त्वन्ये दशधा वर्णा
भवन्ति । अष्टौ वर्णस्थानानि भवन्ति औरस्य कंठ्यं मूर्धन्यतालुदं
त्योष्ठ्यदन्तमूलजिह्वामूलयमानुनासिक्याश्चेति ॥ द्वौ औरस्यौ ह
ह्रस्व इति अआआ३ अवर्णहकार विसर्जनीया इति । त्रयः कंठ्याः ।

ऋषट्मूर्धन्याः । टठडढणष ३ इति । दशतालव्याः । चछज
झजयशईई ३ इति । अष्टौदंत्याः । तथदधनललसाः अष्टावो
ष्ठ्याः । पफबभमाउऊळ ३ वउपध्माचेत्यादयः । एकोदंतमूली
योरेफः । जिह्वामूलीयाः पंच । कुंखुंखुंखुंइति । कमरुमग्मध्मकुं
खुंखुंखुंइतियमाश्चत्वारः ॥ रुक्ममतिप्रथमोज्ञेयः सक्श्वाइत्यपरोभवेत् ।
२३ । २९ तृतीयः विद्वद्इत्याहुः १२ । १९ उपध्मेति चतुर्थकः ॥ ११ ॥

वर्णोंका पहला दूसरा अक्षर श ष स ह यह अघोष हैं, इससे शेष घोष हैं
वर्ण दशस्थान भेदवाले हैं । हृदय, कंठ, मूर्धा, तालु, दन्त, ओष्ठ, दन्तमूलीय, जि-
ह्वामूलीय, यम अनुनासिक । दो उरस्थानी हैं, हह ह्य, तीन कंठस्थानी, अवर्ण, ह
और विसर्ग, छः मूर्धन्य हैं, ट ठ ड ढ ण ष, दश तालुस्थानीय हैं, च छ ज झ ञ य श ङ
ई ई ३ । आठ दन्तस्थानीय हैं त थ द ध न ल ल य, आठ ओष्ठस्थानीय हैं प फ
ब भ म व उ उपध्मानीय एक रेफ दन्तमूलीय है पांच जिह्वामूलीय हैं ऋ कवर्ग
कुंखुंखुंखुंखुंइति । चार यम हैं कम, रुम, ग्म, ध्म, वा ऊं खुं गुं घुं यह रुक्म
यह प्रथमका सक्थ २३ । २९ दूसरा विद्वद् १२ । १९ उपध्मेति वा जम्भेद-
ध्मेति १६ । ६४ चौथा ॥ ११ ॥

प्रथमौचौष्ठनासिक्यौ द्वितीयः कंठचदंत्यश्चनासामूलमुपा-
श्रितः ॥ तृतीयः कंठचजिह्वाग्रेनासायामेव निर्दिशेत् ॥ चतुर्थो
हृदिनासिक्यः कंठेचाभिहितायमाः ॥ १२ ॥

पहला ओष्ठ और नासिकास्थानीय, दूसरा कण्ठ और दन्तस्थानीय, नासामूलमें
स्थित तीसरा कंठ और जिह्वाके अग्रभागमें नासिकामें निर्देश किया है, चौथा हृदय
और नासिकास्थानीय, और कण्ठस्थानीय यम कहा है ॥ १२ ॥

आपंचमैश्चैकपादः संयुक्तपंचमाक्षरम् ॥

उत्पद्यते यमस्तत्र सोऽङ्गपूर्वाक्षरस्य हि ॥ १३ ॥

पंचम वर्णतक एक पदमें वा पांचवें अक्षरके आगे संयोगमें यम प्रगट होता है,
वह पूर्व अक्षरका अङ्ग है ॥ १३ ॥

पंचमाः शपसैर्युक्ता अन्तस्थैर्वापि संयुताः ॥

यमास्तत्र निवर्तते श्मशानादिव बांधवाः ॥ १४ ॥

(३८) वाजसनेयिषीशुक्लयजुर्वेदसंहिता-परीशिष्टभागे-

पांचवाँ अक्षर स श ष से युक्त हो वा अन्तस्थ वर्णसे संयुक्त हो तो वहाँ यम निवृत्त होजाते हैं, जैसे श्मशानसे बंधुक्षन ॥ १४ ॥

ऋवर्णेतिपरेसादावनुस्वारोद्विमात्रकः ॥

संयोगेपरभूतेषुह्रस्वएवोच्यतेबुधैः ॥ १५ ॥

ऋवर्णसे परे सकारकी आदिमें अनुस्वार द्विमात्रिक होता है. और संयोगमें परभूत होनेसे पंडितोंद्वारा ह्रस्व कहाजाता है ॥ १५ ॥

आद्यामात्रातुकण्ठ्यस्य एकारौकारयोर्भवेत् ॥

तालव्यस्यतथोष्ठ्यस्यद्वितीयाचयथाक्रमम् ॥ १६ ॥

एकार ओकारकी पहली मात्रा कंठस्थानीय जानी, दूसरी ताल ओष्ठस्थानीय यथा क्रमसे जानी ॥ १६ ॥

यादृशीरत्नवर्णाभाजपायाःकुसुमेथवा ॥

तादृशंरञ्जयेद्वर्णप्रान्तेनासिक्यमाचरेत् ॥ १७ ॥

जिसप्रकार रत्नोंकी कान्ति वा जपाके फूलोंकी कान्ति होती है, इसप्रकार वर्णों को रंजित कर प्रान्तभागमें अनुनासिक उच्चारण करै ॥ १७ ॥

लाक्षारक्तंयथातोयंनकारान्तंपदंतथा ॥

सर्वरंगंविजानीयाच्छत्रूनिनिदर्शनम् ॥ १८ ॥

जैसे लाखके रंगका जल होता है इसप्रकार नकारान्त पद रंजित हैं, इन सबको रंग जानै यथा 'शत्रूनि' ७ । ३७ यह उदाहरण है ॥ १८ ॥

लुप्तेनकारेयत्स्वारंरञ्जन्तिशौनकादयः ॥

आदिरङ्गंविजानीयान्नचासीदिवविन्दति ॥ १९ ॥

नकारके लुप्त होनेमें जो शौनकादि स्वरको रंजित करते हैं, उसको आदि रंग जानै उसे स्थितिकी समान नहीं जाना जाता ॥ १९ ॥

प्रथमस्थषकारेणतकारेणचसंयुतम् ॥

एतदक्षरमासाद्यत्रिष्टुमेतिनिदर्शनम् ॥ २० ॥

पहले षकार तकारसे संयुक्त यह स्वर 'त्रिष्टुमेति' २८ । ४० इस प्रकारका होता है ॥ २० ॥

प्रथमस्थषकारेणथकारेणचसंयुतम् ॥

एतत्स्वरंमासादाधिष्ठानमितिनिदर्शनम् ॥ २१ ॥

पहले पकार थकारसे संयुक्त होनेसे 'अधिष्ठान' यह उदाहरण १७।१६ होता है ॥ २१ ॥

चतुर्थचतृतीयेन द्वितीयप्रथमेन च ॥

आद्यमध्यन्तथान्त्यञ्चस्वरूपेणाभिपीडयेत् ॥ २२ ॥

चौथे वर्णको तीसरेसे, दूसरेको पहलेसे इस प्रकार आदि मध्य और अन्त्य पञ्चम अक्षरको स्वरूपसे पीडित करे ॥ २२ ॥

अवग्रहपदच्छेद उदात्तदृश्यते यदि ॥

स्वरन्तंस्वरितंप्राहुः सन्धौ तु स्वार्थ्यते परम् ॥ २३ ॥

अवग्रह और पदच्छेदमें यदि उदात्त दिखाई दे उस स्वरको स्वरित कहेंगे, और सन्धिमें वह परवर्णसे स्वार संज्ञावाला होता है ॥ २३ ॥

स्वरसन्धिविधानेन नीचोच्चतुर्विधीयते ॥

व्यञ्जनाद्वास्वराद्वापितत्सन्धौ स्वर उच्यते ॥ २४ ॥

स्वरसन्धिके विधानसे अनुदात्त उदात्त होजाता है, व्यञ्जनसे वा स्वरसे उस सन्धिमें स्वर कहाजाता है ॥ २४ ॥

उदात्तान्निहितः स्वारः स्वरितात्प्रचयो भवेत् ॥

उदात्तात्स्वरितात्पूर्वो नान्य आपद्यते स्वरः ॥ २५ ॥

उदात्तसे निहित हुआ स्वार, स्वरितसे प्रचय होता है उदात्त और स्वरितसे पूर्व अन्य स्वर नहीं होता ॥ २५ ॥

पदकालेयः स्वरितः संहितायांतथैव च ॥

स्वरिताच्चेद्वेत्पश्चात्स एव निश्चितः स्वरः ॥ २६ ॥

जो पद कालमें स्वरित है, संहितामें भी स्वरित है स्वरितसे पीछे होनेवाला ही निश्चित स्वर है ॥ २६ ॥

प्रथमाश्चतृतीयाः स्युः परे घोषवति स्थिते ॥

पञ्चमाः पंचमे पाठे द्वितीयाः शषसेषु च ॥ २७ ॥

आगे घोषवान् वर्णोंको स्थित होनेमें पहलोंको तीसरे होजाते हैं, पाठमें पांचवें वर्णको पांचवां और शषस पर होनेसे दूसरे वर्ण होते हैं ॥ २७ ॥

उदात्तान्निहितः स्वार्थ्यः स्वारोदात्तौ न तत्परौ ॥

स्वरितो यस्तथाभूतो ज्ञेयः सप्रचयः सदा ॥ २८ ॥

उदात्तसे निहित स्वार होता है उससे परे स्वारोदात्त नहीं होते, जो इस प्रकारको स्वरित है उसको प्रचय जानना चाहिये ॥ २८ ॥

(४०) वाजसनायश्राशुक्लयजुवदसाहता—परिशिष्टभागै—

उच्चानुदात्तयोयोगेस्वरितःस्वारउच्यते ॥

ऐक्यंतत्प्रचयःप्रोक्तःसन्धिरेषामिथोद्धृतः ॥ २९ ॥

उदात्त अनुदात्तके योगमें स्वरितही स्वार कहाता है, इनकी एकता होनेसे प्रचय होता है, इनकी सन्धि (संयोग) अद्धृत है ॥ २९ ॥

बह्वीजिह्वायथागृह्णात्यहोवह्निस्तथैवच ॥

ब्रह्मरूपंविजानीयाद्ब्रह्मेवात्मनःसदा ॥ ३० ॥

बह्वी जिह्वा जैसे ग्रहण किया जाता है इसी प्रकार अहः बह्वी उच्चरित होता है, अपने गुरुको सदा ब्रह्मरूप जाने ॥ ३० ॥

यत्किञ्चिद्वाङ्मयंलोकेसर्वमत्रप्रतिष्ठितम् ॥

करोतितत्प्रदानंयत्तस्माद्ब्रह्ममयोगुरुः ॥ ३१ ॥

जो कुछ लोकमें वाणी (शास्त्र) है वह सब इसमें प्रतिष्ठित है उसके दाने करने-सेही गुरु ब्रह्ममय कहाता है ॥ ३१ ॥

विधिनाप्यंविधिज्ञानमविधानान्नलभ्यते ॥

अविधानपरोनित्यंप्रायश्चित्तीभवेन्नरः ॥ ३२ ॥

ज्ञान विधिसेही प्राप्त होता है, अविधिसे नहीं, असावधानी करनेसे मनुष्य प्रायश्चित्ती होता है ॥ ३२ ॥

युक्तियुक्तंवचोआह्वनंआह्वंगुरुगौरवात् ॥

सर्वशास्त्ररहस्यंतद्याज्ञवल्क्येनभाषितम् ॥ ३३ ॥

इति श्रीयोगिप्रवरयाज्ञवल्क्यप्रोक्ताशिक्षासमाप्ता.

युक्तियुक्त वचनकोही ग्रहण करना चाहिये, केवल गुरुके गौरवसेही ग्रहण करना यह नहीं, यह सब शास्त्रका रहस्य याज्ञवल्क्यने वर्णन किया है ॥ ३३ ॥

इति श्रीमहर्षियोगिवरयाज्ञवल्क्यप्रोक्ता; पण्डितम्बानाप्रसादमिश्रकृत—

भाषाटीकासहिता शिक्षा समाप्ता.

॥ शुभमस्तु ॥

पुरतक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम प्रेस—बम्बई.

अवश्यद्रष्टव्य.

अस्माकं मुद्रणालये वेद-वेदान्त-धर्मशास्त्र-प्रयोग-योग-
सांख्य-ज्योतिष-पुराणेतिहास-वैद्य-मंत्र-स्तोत्र-कोश-काव्य-
चम्पू-नाटकालंकार-संगीत-नीति-कथाग्रंथाः बहवः स्त्रीणां
चोपयुक्ता ग्रंथाः, दृश्योत्तिपाणवनाभा बहुविचित्रचित्रिते
उपलब्धग्रंथः संस्कृतभाषया, हिन्दीभाषाया अन्यतरभाषाग्रन्था-
स्तत्तच्छास्त्रार्थानुवादकाः, चित्राणि, पुस्तकमुद्रणोपयो-
गिन्यो यावत्पर्यन्तमागच्छन्ति, स्वस्वलौकिकव्यवहारोपयोगिचित्र-
चित्रितालिखितपत्रवत्पुस्तकानि च, मुद्रयित्वा प्रकाशन्ते
सुलभेन मूल्येन विक्रमाय । येषां यथाभिरुचिस्तत्तत्पुस्तका-
द्युपलब्धये एवं नव्यतया स्वस्वपुस्तकानि मुद्रयिषुभिः
सुलभयोग्यमूल्येन सीसकाक्षरैः स्वच्छोत्तमोत्तमपत्रेषु मुद्रि-
ततत्पुस्तकानां स्वस्वसमयानुसारेणोपलब्धये च पत्रिकादा-
रितैः प्रेरणीयोऽस्मि । अधिकदस्मदीयसूचीपुस्तकानां भिन्न-
भिन्नविषयाणां प्रापणेन “श्रीविठ्ठेश्वरसमाचार” पत्रिकामा-
षणद्वारा च ज्ञेयमिति शम् ।

KHEMRAJ SHRIKRISHNADAS,

“SHRI VENKATESHWAR” STEAM PRESS

BOMBAY.

खेमराज श्रीकृष्णदास,

“श्रीविठ्ठेश्वर” (स्टीम) यन्त्रालयाध्यक्ष-मुम्बई.

